विमुक्त, घुमन्तू व अन्य जनजातियों पर केन्द्रित
बूधन
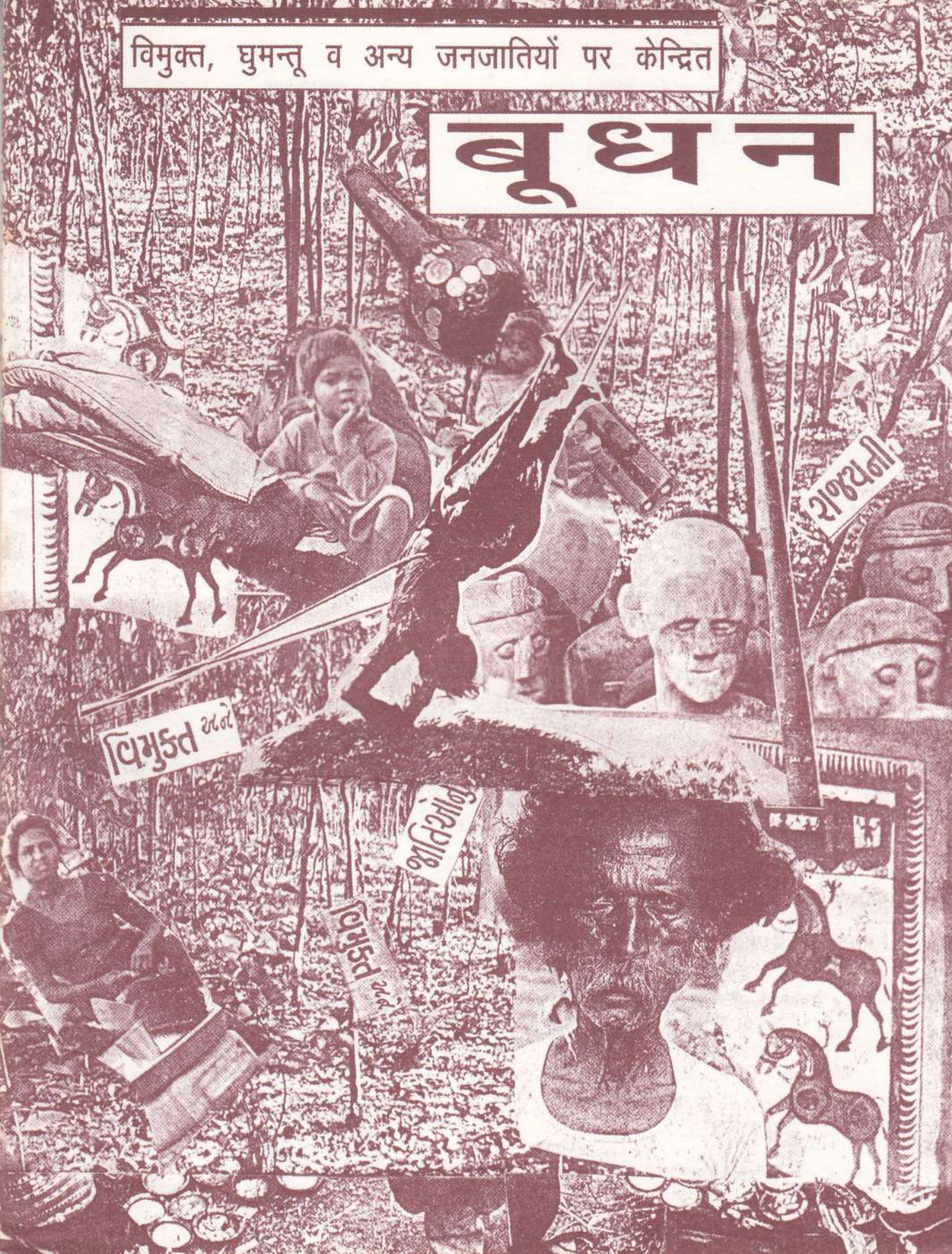
विमुक्त, घुमन्तू व अन्य जनजातियों पर केंद्रित

बूधन

वर्ष : 1 अंक: 2 अप्रैल-जून, 2001

संपादकीय व प्रबन्ध कार्यालय
महापंडित राहुल सांकृत्यायन प्रतिष्ठान
बी-3, सी ई एल अपार्टमेंट्स
बी-14, वसुन्धरा एन्क्लेव
दिल्ली-110096
फोन : 2618064, 4922803

अनुक्रम

एजेंट बनें :

अनेक जगहों से हमें पाठकों की शिकायत मिली है कि 'बूधन' उन्हें उनके शहर में नहीं मिल पा रही है। पाठकों की शिकायत को ध्यान में रखते हुए हम एजेण्ट नियुक्त करना चाहते हैं। एजेंसी के लिए कृपया हमारे कार्यालय से संपर्क करें अथवा हमें लिखें। —संपादक

बूधन प्राप्त करें :

1. वाणी प्रकाशन बुक कार्नर, श्रीराम सेंटर, मंडी हाउस, नई दिल्ली
2. पुस्तक मंडप, स्टॉल नं 3, कला संकाय (दिल्ली विश्वविद्यालय नार्थ कैम्पस)
3. पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, जी-2 कनॉट सर्कस, नई दिल्ली-110001
4. गीता बुक सेंटर, शापिंग कॉम्पलेक्स, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय परिसर, नयी दिल्ली-67

सहयोग राशि

एक प्रति : 10 रुपये (व्यक्तिगत)
20 रुपये (संस्थागत)
वार्षिक : 40 रुपये (व्यक्तिगत)
80 रुपये (संस्थागत)

हाशिए के लोग

'बूधन' का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ और हमारी उम्मीद से अधिक दूर तक पत्रिका पहुँची तथा लोगों ने हमें पत्र भी लिखे। इससे हमारा उत्साह बढ़ा है। जिस उद्देश्य हेतु यह पत्रिका निकली है, उसके साथ आपका जुड़ाव हमें बल देता है।

आज हमारे समाज की मुख्यधारा में विकास की बड़ी-बड़ी बातें होती हैं, भूमंडलीकरण और विश्वग्राम की बातें होती हैं। पर इसी भारतीय समाज का एक हिस्सा रही— जनजातियाँ, विमुक्त एवं घुमन्तू जातियाँ पूर्णत: सूरतविहीन होती जा रही हैं या हो चुकी हैं। विमुक्त एवं घुमन्तू जाति के लोगों की कोई अलग सूची नहीं है। इनको विभिन्न प्राँतों में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य जातियों में सम्मिलित किया गया है। पर इसके बावजूद ये सभी एक ही जाति— तथाकथित 'अपराधी' जाति— के कहे जाते हैं। इन विभिन्न जातियों को एक समूह का रूप देने वाला ब्रिटिश काल का वह काला कानून है, जिसने रातोंरात इन्हें 1871 में 'अपराधी जनजाति' बना दिया। इस तरह जातीयता पर आधारित भारतीय समाज में एक और जाति सम्मिलित कर दी गयी।

ब्रिटिश सरकार भारत में ऐसा कानून लागू करने में सफल हुई उसका एक मात्र कारण हमारे समाज में पहले से चला आ रहा जात-पाँत का भेदभाव ही प्रतीत होता है। ब्रिटिश सरकार ने हमारी इसी मानसिकता का फायदा उठाया। अन्यथा गौरवपूर्ण इतिहास वाली इन जातियों को भला कौन अपराधी कह सकता था। भीलों की कुर्बानियों को कौन नहीं जानता। बंजारों द्वारा समाज को पहुँचाए जाने वाले हितों से कौन अपरिचित है। आन-शान की धनी इन जनजातियों की मौखिक परम्पराएं इनकी वीरता, दुश्मनों के सामने घुटने न टेकने तथा उनकी प्राचीन संस्कृति का सहज अहसास दिलाती हैं। पर अंग्रेजों ने हमारी जात-पाँत के भेदभाव की मानसिकता का फायदा उठाते हुए 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने वाली जातियों को 'अपराधी' जाति घोषित करने का सिलसिला प्रारम्भ कर दिया था। 1871 तक तो ब्रिटिश सरकार ने एक अधिकारिक सूची तैयार कर ली थी तथा इसी साल 'अपराधी जनजाति अधिनियम' 1871 लागू किया गया। इस अनुसूची में आगे भी अनेक जातियों को शामिल करने का सिलसिला जारी रहा तथा इस कानून में कई बार संशोधन भी किए गए।

भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत दंडित पाए इन जातियों के लोगों को तथाकथित 'सुधार' हेतु कटीले तारों की घेरेबंद बस्तियों में रखा जाता था तथा कहीं भाग न जाएँ इसलिए इन्हें गार्डरुम में दिन में कई बार हाजिरी देनी पड़ती थी। इन बस्तियों को 'सेटलमेंट्स' कहा जाता था। इन जातियों का जीवन घेरेबंद करने का नतीजा यह निकला कि वे कलंकित हुए, समाज से पूरी तरह अलग-थलग हो गए तथा जीवन-यापन हेतु किसी भी तरह का हुनर सीखने की संभावना से भी दूर हो गए। इन दमनकारी बस्तियों में जीवन कैसा होता था, इसका अहसास हमें तब हुआ जब हम अहमदाबाद के छारानगर की 77 वर्षीय प्रांची श्यामजी बाई से 27 फरवरी, 2001 को मिले। महाराष्ट्र के नन्दूरबार जिले की प्रांची श्यामजी बाई बचपन में गधे की पीठ पर बैठ कर अपने माँ-बाप के साथ

निफिक्र जहाँ-तहाँ घूमा करती थीं। यकायक एक दिन उन्हें धुले जिले की एक घेरेबन्द बस्ती में (उनके माँ-बाप के साथ) इसलिए बन्द कर दिया गया कि उनका तथाकथित 'सुधार' किया जा सके। यद्यपि उन्होंने कोई अपराध नहीं किया था पर 'अपराधी' जाति में पैदा हुई प्रांची श्यामजी बाई का 'सुधार' आवश्यक समझा गया। शादी के बाद धुले की घेरेबंद बस्ती से अहमदाबाद की घेरेबंद बस्ती में आ गयीं और यहाँ भी उनका जीवन धुले की बस्ती जैसा ही रहा।

देश की आजादी तो 1947 में आ गयी पर इन्हें घेरेबंद बस्तियों से छूटने में पूरे पाँच साल और लगे। 1952 ई. में इन जनजातियों को अनधिसूचित किया गया, विमुक्त किया गया। पर जात-पाँत की हमारी मानसिकता आजादी के साथ छूट थोड़े ही गयी। कई प्रदेशों ने 'अभ्यासिक अपराधी अधिनियम' लागू कर इन जातियों के लोगों को इस कानून के अन्तर्गत लाकर अलग-थलग रखा तथा यातना देना प्रारम्भ कर दिया जो आज भी अनवरत जारी है। आश्चर्य तो इस बात का है कि तथाकथित सभ्य-समाज के लोग वंशानुक्रम से अपराधी होने या अभ्यासिक तौर पर पीढ़ी दर पीढ़ी अपराधी होने जैसे तर्कों को सहजता से स्वीकार कर लेते हैं।

इस तरह हमारी इन्हीं मानसिकताओं के शिकार होकर विमुक्त और घुमन्तू जातियों के लोग प्रशासन, पुलिस तथा यहाँ तक कि कई बार आम जनता द्वारा भी जहाँ-तहाँ पूरे देश में मारे जा रहे हैं। उन्हें कोई यह भी नहीं बताता कि आखिर उनका अपराध क्या है? वहाँ मानवाधिकार का सवाल भी नहीं उठाया जाता।

जैसे उनके दुखों का घड़ा अभी भरा न हो— मध्य प्रदेश के मानवाधिकार आयोग ने 'मध्य प्रदेश में जाति गत वेश्यावृत्ति' नामक रिपोर्ट प्रकाशित कर बाँछड़ा, बेदिया और सांसिया जातियों पर वेश्यावृत्ति और दलाली का आरोप लगा दिया। यह रिपोर्ट यह भी कहती है कि डॉक्टरी परीक्षण के अनुसार इन जातियों की 50 प्रतिशत महिलाएँ एच आई वी से संक्रमित हैं। अव्वल तो किसी भी व्यक्ति का उसकी रजामंदी के बिना एच आई वी की जाँच करना ही मानवाधिकार का उलंघन है। परन्तु इस रिपोर्ट ने तो इन कुछ जातियों को एच आई वी संक्रमित घोषित कर दिया। गुलामी के दौरान सैकड़ों वर्षों तक बिना कारण यातना, दमन वर्दाश्त करने वाली ये वन्य जातियाँ हमारी अच्छी भावनाओं, हमारे सहारे तथा भाईचारे की पात्र हैं। पर हमने उन्हें क्या दिया? जहाँ ब्रिटिश सरकार ने उन्हें जन्मजात अपराधी घोषित किया वहीं हमारे स्वतंत्र एवं लोकतांत्रिक भारत वर्ष में उन्हें 'अभ्यासिक अपराधी', जातिगत वेश्यावृत्ति करने वाले तथा संक्रमित घोषित किया गया। क्या फर्क है? यदि हमें दिमागी गुलामी की बेड़ियाँ पहने रहना है तो क्यों हम अपने आप को स्वतंत्र कहते हैं?

'बूधन' के माध्यम से हम आप सभी मिलकर इस कलंक को मिटाने की दिशा में प्रयास करेंगे क्योंकि 'बूधन' महज पत्रिका नहीं एक अभियान है।

इस अंक में बुंदेलखंड के इलाके में रहने वाली कबूतरा जन जाति, मुसहर जाति तथा अहमदाबाद छारानगर पर विशेष लेख, मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट पर विश्लेष्णात्मक लेख प्रस्तुत कर रहे हैं। कंजर जाति के छारानगर के युवा लेखक दक्षिण बजरंगे का 'बूधन' नाटक भी सम्मिलित किया गया है। ये रचनाएँ हमारे समाज की इन छह करोड़ जनजातियों के ऊपर आजादी के पचास साल बाद भी हो रहे अत्याचारों की गवाह हैं तथा न्याय माँग रही हैं। क्या हम दे सकेंगे?

अनिल कुमार पाण्डेय

आपका पत्र मिला

● 'बूधन' का अंक पढ़ लिया था। यह मेरे लिए अत्यन्त उपयोगी है। यहाँ पीलीभीत जनपद में नेपाल से सटे हुए इलाके में 'थारू' जनजाति के लोग निवास करते हैं। अत्यन्त भोले-सीधे वे लोग आज भी विकास से बहुत दूर हैं, और प्राय: दूसरे लोगों द्वारा ठगे जाते हैं। जल्दी ही उन लोगों के बीच जाना मैंने तय किया है। यह सही है कि नेतृत्व उनके लोगों के बीच से खड़ा हो। यहाँ भाकपा-माले के कुछ लोग उनके बीच सक्रिय हैं, पर अधिक नहीं। पार्टियों के अपने राजनीतिक हित हैं। वे उनकी भाषा , उनके रीति-रिवाज़ या उनकी कला की बात नहीं करते। इधर तराई में तो पूरी एक बेल्ट थारूओं की है, जिसे थरुहाट कहते हैं। मुझे नहीं पता कि डी एन टी-रैग उनके बीच सक्रिय है अथवा नहीं। मैं वहां से लौट कर आपको लम्बा पत्र लिखूंगा।

- सुधीर विद्यार्थी,
संपादक, 'संदर्श', बिंसलपुर, उत्तर प्रदेश

● मैंने इस महान् और महादेश में यहीं के मूल बाशिंदों—जनजातियों—की अस्मिता एवं अस्तित्व के संकट को लेकर आप लोगों—शीर्षस्थ बुद्धिजीवियों—की चिंता और चिंतन के बारे में पहले सुना था। सक्रियता की दिशा-दृष्टि-लक्ष्य के बारे में अधिक परिचित हुआ 'बूधन' के जन०-मार्च, 2001 अंक से जो मुझे जयपुर में ही विजेंद्र जी ने दिया। वैसे इससे पूर्व राजाराम भादू जी से अपील, मानवाधिकार आयोग में प्रस्तुति की छायाप्रति ली थी।

हम आदिवासियों को समर्पित एक पत्रिका 'अरावली उद्घोष' (उदयपुर) निकाल रहे हैं—गत 14 वर्षों से लगातार। मैंने 'बूधन' से कुछ सामग्री आगामी चेतना विशेषांक के लिए ली है जो जुलाई में आएगा। इस एक अंक (चार में से साल के) का संपादन दो वर्षों से मैं कर रहा हूँ।

मैंने 'बूधन' के इस अंक को मनोयोग से पढ़ा। मुझे आशावान किया। आभार। 'युद्धरत आम आदमी' (रमणिका गुप्त) के आदिवासी विशेषांक प्र० खण्ड निकल चुका है। देखें शेष आगे...।

- हरिराम मीणा
संपादक, 'अरावली उद्घोष' जयपुर, राजस्थान

● मुझे ज्ञात हुआ है कि घुमन्तू जनजातियों पर केंद्रित पत्रिका 'बूधन' का प्रकाशन/संपादन आपके द्वारा हो रहा है। मैं उक्त पत्रिका के सभी अंक क्रय करना चाहता हूँ, चाहें तो वी पी पी से भिजवा दें, अन्यथा लिखें कि कितनी राशि भेज दूँ ताकि पत्रिका मिल जाए।

शुभकामनाएं।

- जयंत वर्मा, जबलपुर, छत्तीसगढ़
अध्यक्ष, मध्यप्रदेश वर्किंग जर्नलिस्ट्स यूनियन
(आई एफ डब्ल्यू जे) भोपाल

● विमुक्त, घुमन्तू व अन्य जनजातियों पर केंद्रित 'बूधन' के प्रवेशांक के लिए हार्दिक बधाई। हिन्दी में यह एक महत्वपूर्ण कार्य है। 'बूधन' के लिए हर संभव सहयोग कर मुझे खुशी होगी। इन दिनों में 'कबीर' सिरीज में रचनाएँ लिख रहा हूँ। 'बूधन' के प्रवेशांक से प्रेरित होकर 'कबीर' सिरीज की तीन रचनाएं आपको भेज रहा हूं। सरगुजा की जनजातियों पर भी लिखूँगा।

'साम्य' का एक विशेषाँक आपको भेज रहा हूँ। पत्र दीजिएगा।

सभी मित्रों को मेरा नमस्कार।

- विजय गुप्त, संपादक, 'साम्य'
सरगुजा, छत्तीसगढ़

● 'बूधन' का प्रवेशांक मिला। हार्दिक बधाई स्वीकारें। धीरे-धीरे पूरा अंक पढ़ लिया है। अपने ढंग से एक महत्वपूर्ण काम आपने हाथ में लिया है। इसे अंक पूरा पढ़कर ही समझा जा सकता है।

ढेर सारी जानकारी और सूचनाएं मैंने पहली बार पढ़ी और जानी हैं। ये झकझोरती ही नहीं, बार-बार आंदोलित भी करती हैं। कैसे हैं हम? और कैसा है हमारा समाज?

- महावीर अग्रवाल, संपादक 'सापेक्ष'
दुर्ग, छत्तीसगढ़

● आपने 'बूधन' का हिन्दी अंक बहुत अच्छा निकाला है। मेरी बधाई कबूल करें। सबको सलाम!''

स्नेहकांक्षी

- आत्माराम कनिराम राठौर
दीनबन्धु/शास्त्री चौक/पो० बॉ०-12/बर्धा (महा०)442001

● राष्ट्रीय सहारा से आपकी पत्रिका 'बूधन' की जानकारी हुई।

कृपया मुझे पत्रिका के प्रथमांक से ही एक वर्ष के लिए सदस्य बनाएं।

- शुक्ल चंद्र जैन,
तिलक नगर, नयी दिल्ली

[हिन्दी की प्रसिद्ध कथाकार मैत्रेयी पुष्पा ने कबूतरा जनजाति के समाज और जीवन संघर्ष पर पहला महत्वपूर्ण उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' लिखा है। इस आलेख में 'अल्मा कबूतरी' के लेखन के सिलसिले में कबूतरा जनजाति के जीवन को जानने और पहचानने के लिए लेखिका ने जिन कठिन स्थितियों का सामना किया है उसका वृत्तांत है। साथ ही कबूतरा जनजाति से सम्बन्धित लेखिका के कुछ ऐसे अनुभव भी व्यक्त हुए हैं जो उपन्यास में नहीं हैं।]

अल्मा कबूतरी की खोज में

□ मैत्रेयी पुष्पा

मैं भटक रही हूँ।

उस पहाड़ के चारों ओर चक्कर काट रही हूँ, जो अपनी बनावट में गोल है। यह गोलाई की आड़ अपने पीछे एक 'कबूतरा बस्ती' को छिपाये हुये है। कुछ लोगों का मानना है कि पहाड़ इन छिपकर साँस लेने वालों को कब तक बचायेगा आखिर? अब तक इन जैसों की बस्तियाँ जैसे उजड़ती रही हैं, आगे भी उजड़ेंगी, यह तय है। कुछ सिर हिलाकर अनुमोदन करते हैं, क्योंकि मानते हैं कि ऐसी बस्तियाँ भूखे दरिदों की होती हैं।

मैं उन शातिर बदमाश और चोर-उचक्के, खूनी-हत्यारों को क्यों देखना चाहती हूँ? वे मेरे लिये ऐसे अपरिचित भी नहीं कि जिज्ञासा के जरिये कुछ विचित्र जानकारी हासिल करूँ। जानकारियाँ समाजशास्त्री हासिल करते हैं आजकल। मैं क्यों इस खूँखार कौम के हवाले अपने आपको करना चाहती हूँ? अपने घर, गाँव या समाज की औरतें यहाँ क्यों आयेंगी? कोई कारण नहीं। यहाँ तो समाज के 'सज्जन लोग' भी नहीं आते। खतरे लगें या बेआबरू होने का अंदेसा रहे, क्योंकि यहाँ कुछ चंडू, मद-लोभी और सज़ा काटने के लिये तैयार कबूतराओं के खरीददार आया करते हैं।

हाँ, यह सिलसिला अवश्य रहा है कि कौतूहलवश इस बस्ती को रहस्यमय ढंग से देखो, क्योंकि जब न तब ऐसे दृश्य उभरकर सामने आ जाते हैं, जिनमें से परपीड़न का आनन्द सोते की तरह फूटता है। पुलिस या शराब के लायसंसशुदा ठेकेदार ही कबूतराओं को पीटते हुए गाँव के नजदीक सार्वजनिक रास्ते पर लाते हैं। पता नहीं किस जुर्म में कबूतरा कहा जाने वाला व्यक्ति तेलपिये डंडे से, भारी बूटों की ठोकर से पिटता-लुढ़कता जनता के आगे तड़पता रहता है। एक पल ऐसा आता है, जब हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं, और तीक्ष्ण तीती सिहरन तन-मन में बिजली-सी दौड़ जाती है, क्योंकि पिटनेवाले के कंधों और रीढ़ के ऊपर की खाल आघातों से फट जाती है। लाल-लाल माँस धूप में चिलक उठता है, मुँह की राह भी वह खून छोड़ रहा होता है। तब हम अपने कज्जा (बड़े समाज के लोग) होने पर संतोष की साँस लेते हैं।

इस पहाड़ी रास्ते और गाँव के दरमियान ऐसे दृश्य बनते रहे हैं, हम बचपन से लेकर अब तक इसी पीड़ादायी आनंद की अनुभूति से गुजरते आये हैं।

आज तो मैं अपने छोटे भाई सोबरन को ढूँढ़ने आई हूँ। पैंतालीस साल का निपट-नादान अध्यापक, लम्बे कद का शरीर और क्षत्रिय चेहरा, आँखें छोटी, मगर गहरी भेदती हुई... घर से खदेड़ा-भगाया मेरा मुँहबोला भाई किसी 'कबूतरी के घाघरे का गुलाम' माना जाता है। 'हरामी-दारूबाज' से ज्यादा कुछ नहीं समझा जाता। कई बार उसको राजा काका ने पाँव का जूता उतारकर पीटा है। दिलीप उसके मुकाबले उम्र में कितना छोटा, बच्चे जैसा, होठ टेढ़े करके गाली देकर रह गया।

कहाँ मिलेगा सोबरन? उसका बिछोह इस कदर साल रहा है कि चेहरा बदहवास, देह धूल में नहाई हुई, बाहें जली लकड़ी-सी और चप्पलों के बावजूद पाँवों में ततूरी (तपती धरती की जलन) लगी है। मन यों भी झुलसा हुआ है कि भाई के लिये ऐसे कुविशेषण लोगों के मन में आयें, जितने लाँछन सुनकर मैं पहाड़ियों से, खेतों से, तालाब से ओर उन

रास्तों के लिये गाँव की नुमाइंदगी कर रहे सभ्य लियाकतदारों की समाज में सम्मानित लोगों से नहीं पूछ पाई कि सोबरन, मेरा भाई कबूतरियों का गुलाम कैसे है? घबराकर आकाश की ओर देखती हूँ। शून्य से जैसे पूछती हूँ—क्या, सोबरन की बात जैसे मैं मान लेने को तैयार हूँ, वैसे लोग भी मान लेंगे? या कबूतरा बस्ती का हर एक मामला उसकी दारू में डूबो दिया जायेगा?

''तुम यहाँ कहाँ मैत्रेयी?'' यह सवाल कई बार हुआ। अचकचा गयी। निगाह इधर-उधर फेर ली। लुकने छिपने की जगह बियावान में कहाँ? लाचार-सी सोचती हूँ। इस बदनाम और खौफनाक मानी जानेवाली जंगली बसावट के पक्ष में क्या बोला जाये?

और नजरें चुराती-सी यकायक आँखें उठाकर देख लेती हूँ --सोबरन!

किसी की भी परवाह किये बिना आगे बढ़ चली।

आमने सामने खड़े हैं बहन-भाई।

अपनी जिज्जी को प्रणाम करके आश्चर्य से देखता है सोबरन—तुम फिर आ गयीं मेरे पीछे-पीछे!

—कोई एक आगे बढ़े तो सही, देखकर दूसरे लोग पीछे-पीछे हो लेते हैं।

—जिज्जी, ये अपराधी लोग जनम-जनम के पापी। माथे पर कुछ खुदा नहीं, हाथों पर भी खून नहीं लगा, पर समझो कि चेहरा ही थाने का कागज है, जिस पर दरोगा, सिपाही जब मन आये, मौका लगे, कलम चला दें। ये राजकाज के अनलिखे-गजेटियर, क्या लिख पाओगी तुम?

—कुछ नहीं। कुछ भी नहीं। गाँवों के घरों-खेत-खलिहानों को ध्वंस करने वाले लोग, जो हाथ पड़ जाये, उसी की हत्या पर उतारू कबूतरा कैसे विचित्र हैं कि अच्छे आचरण से नफरत करते हैं। चेहरों पर गुस्सा पुता रहता है, पर डर क्यों नहीं लगा मुझे? इसलिये कि तुझ से मिलने को व्याकुल चली आ रही थी सोबरन।

राजा काका ने मैत्रेयी को सोबरन की बात पर झिड़क दिया था, ''उस नालायक को क्या जानकारी है? भाषण देता है कि ये लोग तुम्हारे पुलिस विभाग, कानून और राजतंत्र की तरह खुद को किसी से छिपाते नहीं। न किसी खतरे से ही खुद को बचाते, बस अपने हाथ पाँव साबुत रखने के लिए जंगल में भाग जाते हैं। क्या करें, भूख उनका सबसे खूँखार देवता है। उस देवता के पुजाये के लिये हाथ पाँव चाहिये ही चाहिये, सो चोरी-चाकरी लाजिमी हो जाती है। राहजनी करते हुये बात मारकाट तक पहुँच जाये तो कोई क्या करे? काका, खेती नहीं, मंजूरी नहीं तो कोई आदमी धरती फोड़कर अन्न कहाँ से ले आये, जब कि उनके पास फोड़ने के लिये ही अँगूठे भर अपनी धरती भी नहीं। जो आजीविका है, जैसी-तैसी है, उसी से ईमानदारी बरतनी है— ऐसे कहता है बेईमान सोबरन।''

मैं सोचती हूँ—कहाँ से हुआ रे यह ज्ञान?

कब की बात है यह! सन् 1993 की। पूरे तीन साल।

आज तो कबूतरा बस्ती से काफी दूर खड़ी अपने हाथ में बँधी घड़ी देखती हूँ। गर्मी की सुबह के साढ़े-आठ बजे हैं।

सोबरन, कबूतरा बस्ती में मेरे घुसने की लाठी, जिसके साथ-साथ आगे बढ़ना है, बाकी कौन है यहाँ, मेरी 'सनक' को समझने वाला?

हाय नासपरे सोबरन...खटिया बिछाकर बैठा है और कबूतरी के साथ ताश खेल रहा है! जरूर दारू में धुत होगा। रात को गांव गया ही नहीं होगा। यहीं पिया-खाया, यहीं सोया। पगला कबूतरियों की आदत जानता तो होगा, कब्जे में आया आदमी ऐल-फैल करे तो पहले-फूल की (शुरुआती) दारू पिलाकर खतम कर देती हैं। शराब से मरने वाले की मौत का कारण शराब ही होती है, कबूतरी नहीं।

पर यह जीता-जागता मेरा भाई, कबूतरियों का सम्मान करता है? बराबरी पर देखता है?

देखो न, पाँवों में झुकता हुआ मुझे प्रणाम कर रहा है, मुँह से कुछ बोलना चाहा, जीभ लटपटा गयी।

☆ ☆ ☆

मैं पीछे लौटती हूँ।

सन् 1958 के साल में, पिछले पैंतालीस वर्षों से जो होता आ रहा है, वह इस कबूतरा बस्ती का दमनपूर्ण इतिहास है। मेरे लिये और सोबरन के लिये यह महज खेल नहीं, इसमें ढेरों बड़ी-बड़ी बातें छिपी हैं। कहते हैं कि इसमें मुगलों से लेकर अंग्रेजों तक का युग समाया हुआ है। उस

युग को कितनी आसानी से जीतना चाहता है कबूतरा! कैसे एक मजबूत विश्वास खड़ा करता है कि जैसे रानी पद्मिनी अपराजिता रहीं, राणा प्रताप ने अपना शौर्य बरकरार रखा, शिवाजी से लेकर झांसी की रानी के साथ मिलकर चूहों के कौशलपूर्ण युद्ध के योद्धा जूझे, ऐसे ही वह भी खड़ा होता है। जबकि दृश्य कुछ ऐसा है कि पूर्वज जो थे, होंगे, मगर वह जो कुछ आज हैं, हमारे सामने है। वह जिस टोली के साथ खड़ा हो जाये, वही टोली भाग खड़ी होती है।

याद आता है उस जमाने से इस जमाने तक फैला दायरा। सोबरन पांचवी कक्षा में पढ़ने वाला बच्चा था और मैं थी हाई स्कूल में पढ़नेवाली लड़की। प्राइमरी स्कूल के मास्साब वेतन लाये थे। अपने बक्से में रुपये रखकर तालाबंद करके सोये थे। उसी रात रुपये चोरी हो गये। हाय-हल्ला मचा। खोज-पुकार हुई। चोर का नाम निकालने में सिद्ध दर्च्चीं कक्का बुलवाये गये। बहुत से लोगों को चावल पढ़कर दिये गये। कहीं सूत्र नहीं मिला तो महामाई पर पाँच कन्यायें जिंवाईं।

अब कोई जोर कहीं नहीं, पुलिस आ गयी।

कंधे पर बंदूक रखकर बूट धमधमाते हुये सिपाही कबूतरा बस्ती पहुँचे। बाकायदा चोरों को पकड़कर लाये। देखते ही देखते सड़क पर पिटाईखाना खुल गया। हमारी उम्र के बच्चों ने ऐसी पिटाई पहली बार नहीं देखी थी, फिर भी हम नये सिरे से घबराये, काँपे और रुलाई रोकते रहे। सड़क का काला तारकोल लाल हो गया। इस रास्ते आने वाली बैलगाड़ियाँ, ट्रैक्टर और बस रुक गये। स्कूल की छुट्टी करनी पड़ी। सिपाहियों की बहादुरी देखते ही बनती थी और कबूतराओं की सहनशक्ति का इम्तहान था। चमड़े के कोड़े की फटकार के साथ दर्शकों का सीत्कार उठता, मगर कबूतराओं की तो जैसे साँस भी बेआवाज हो गयी। वे झूठ की मिट्‌टी से बने आदमी, अपना जुर्म कबूल करें तब छोड़े जायें। कोड़ा, घूँसा और जूता उनकी देह पर दस्तक देते रहे।

अंत में न मालूम कैसे सिद्ध हुआ कि कबूतराओं ने अपना जुर्म स्वीकारा है। कोई कहे सिर हिलाया था, कोई कहे आँखों से कबूल किया था और यह भी कहा जा रहा था कि मारते हुए सिपाही के गोड़ पर सिर धर दिया था, मतलब कि चोरी अपने सिर मान ली। जवाब जैसे भी दिया हो,

कंधे पर बंदूक रखकर बूट धमधमाते हुये सिपाही कबूतरा बस्ती पहुँचे। बाकायदा चोरों को पकड़कर लाये। देखते ही देखते सड़क पर पिटाईखाना खुल गया। हमारी उम्र के बच्चों ने ऐसी पिटाई पहली बार नहीं देखी थी, फिर भी हम नये सिरे से घबराये, काँपे और रुलाई रोकते रहे। सड़क का काला तारकोल लाल हो गया।

'रुपये क्यों चुराये' जैसा सवाल किसी ने उन घायलों से नहीं किया। 'बेशर्म' और 'पिटा' लोगों से सवाल नहीं किये जाते। विश्वास यह भी था कि ये ढीठ लोग पुलिस के हिसाब तले आयेंगे और कचहरियों की कलमें इन्हें काटेंगी, वकीलों के कारण ये हारेंगे तो ये भी अपना हिसाब चुकाये बिना मानेंगे नहीं। रस्साकसी पुरानी है। पुरानी है, मगर जर्जर नहीं, दिन-ब-दिन मजबूत होती जाती है।

बचपन से पिटने की कला के मौनी माहिर वीरदेव का नाम सुमिरकर 'चलो थाने' की आवाज पर चेहरे से सजा काटने के लिये वे तत्पर दिखे।

उठते हुए कबूतराओं को सिपाहियों ने धक्के दिये— साले हरामी, तुम्हारा अचार डालेंगे हम?

सिर के बल गिरते तो काशीफल की तरह जमीन से टकराकर उनके सिर फट जाते। मगर वे संकेत समझते हुए सध गये— 'अचार डालेंगे'—मतलब कि औरतों को थाने जाना होगा।

मुजरिम हवालात के लिये चले गये। तमाशा छंट गया। मास्साब के रुपये फिर भी नहीं मिले। मिलते कहाँ से?

रुपये सोबरन की निकर की जेब में थे। निकर आगे की ओर पेशाब से भीग गयी थी। सोबरन को बुखार चढ़ आया।

☆ ☆ ☆

दृश्य पलटता है।

डटकर चोरियाँ होती हैं। चैत के महीने में खेत में खड़ी फसल के डूंड़ रह जाते हैं—बाल कतरी का मामला। गड़रियों की बकरी-भेड़ गायब हो जाती हैं—जरूर किसी कबूतरा बच्चे ने जन्म लिया है। भैंसें हांक ली गयीं—जन्मजात

अपराधियों को घूस भरनी होगी। खलिहान की रास—खाने के लिये अन्न का जुगाड़ कौन नहीं करना चाहता?

थानेदार से लेकर एस०पी० तक सनसना जाते हैं—टाटियों-झोंपड़ियों में रहने वाले, झाड़ियों-झरबेरियों की कांटेदार गली में चलने वाले लहूलुहान मुट्ठीभर लोग, गाँवों में गदर मचाये हैं। सज्जन, सभ्य और समर्थ लोगों को अपनी दहशत के पंजे में कसने वाली यह क्रिमिनल ट्राइब! आये दिन अखबार में छपी खबरें आतंक बढ़ाती हैं—बच्चे का सिर कलम करने वाले दो कबूतरा गिरफ्तार। दुल्हन के जेबर कबूतरियों ने उतारे, मुँह में कपड़ा ठूँस दिया, हाथ पाँव बाँध दिये। हत्यारी कबूतरियाँ शातिर और खूबसूरत डंकिनी पुलिस की आँख का नूर और काँटा साथ-साथ बनकर रहती हैं। उन्हें काबू करना सिंहनी के गले में हाथ डालना है। अतः लाजिमी है कि पहले इल्जामों का जाल बिछाया जाये, मनोबल तोड़ा जाये। रीढ़वाली स्त्री पर कौन हाथ आजमाये, जैसी धारणायें और इनसे प्रभावित व्यवहार इस इक्कीसवीं सदी में क्या सिद्ध करना चाहता है।

अपवाद ही था कि बालक सोबरन कबूतराओं का गुनाहगार और 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास का मंसाराम बना। उसकी बहन मैत्रेयी ने जन्मजात अपराधियों का कोई इतिहास नहीं पढ़ा, किसी गजेटियर में उनका जिक्र नहीं मिला, वेद पुराण और स्मृतियाँ भी मौन रहीं। वह तो केवल भूरी कबूतरी के मुँह उसकी जातिगत कहानियाँ सुनकर बड़ी होती रही। भूरी को मालूम था—देश आजाद हो गया। देश किस आदमी का नाम है, यह मालूम नहीं था। वह जवाहरलाल को राजा मानती थी, क्योंकि राजा-रानियों की कहानियों के सिवा वह किसी की कथा नहीं जानती थी। वह जब-जब सजा पाती, अपनी बड़ी-बड़ी आँखों और लम्बी-लम्बी बाहों को घुमा-घुमाकर मानों बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ लड़ने की चुनौतियाँ देती। गाँव घुसती तो कुत्ते भौंकते, बेपरवाह औरत हमारे दादा के पास आकर धरती पर बैठ जाती। फिर बातें करती- अपने लोगों की वीरता की, बदमाशियों की, विरोधों की और गलतियों की। कई बार अवसर-मौके पर भूरी कबूतरी ने गाँव को अपने लोगों की ताकत और जीवट का नजारा दिखा दिया था। कई केसों में वह अपने दल के साथ हाथ, पांवों, कुल्हाड़ी और डंडों से लड़ी। कई मामले गोरखा पल्टन की तरह निपटाये।

गाँव ऋणी था, मगर कबूतरा साहूकार न थे। ब्याज तो ब्याज मूल तक दरिया में डाल देते। न यह कह पाते कि अब वे मुजरिम नहीं, तुम सबमें शामिल हैं।

न कहें, दादा ने समझ लिया था, आजाद देश में ये गुलाम भी आजाद हो जाने चाहिये। चिमन सिंह यादव ने प्रदेश के मुख्यमंत्री के नाम पत्र लिखा था—बेकसूर लोगों की सजा यह है कि उन्होंने कसूरवार ठहराये जाने वालों के वंश बीज से जन्म लिया है। पुलिस के खतावार ये बांकुरे लोग कोई खता न करें, यह भी खता है। बेबात सजा देने वालों को सजा दी जाये हुजूर। जन्मजात अपराधी की चिप्पी हर कबूतरा के माथे पर चिपकी है, जो दिखती नहीं, मगर रहती है। और ये लोग जिस भूमि पर जन्मे हैं, उसी पर चलने की मोहलत इन्हें चबा लेती है। कागज का हुकुम व्यवहार में फुस्स हो जाने वाला ही हुआ, क्योंकि मोघिया, कलंदर, सांसी, पारदी, औदिया, कबूतरा आदि जातियों के लोग हाड़ मास के, सांस लेते आदमी हैं, जिनके सीने में जिंदा दिल धड़कता है।

दादा की यह भावाकुलता शासकीय विधान पर असर न डाल सकी क्योंकि उनके पास समाजशास्त्रीय ढंग के विस्तृत आंकड़े और तरतीबवार ब्यौरे न थे कि देश के कितने करोड़, कितने लाख, कितने हजार जन्मजात अपराधी अपने जन्म के कारण सजा की यातना भोगने के लिये अभिशप्त हैं। न ही दादा यह बता सकते थे कि गुलाम भारत में अंग्रेजों के मुकाबले आजाद देश के नागरिक जुल्म ढाने में कम नहीं, कई गुना आगे हैं। आदिम बर्बरता ज्यों की त्यों भी नहीं, चौड़े मुँह की सुरसा हो चली है, जो आदिवासी और इन बहिष्कृतों के मद में आई रकम को लील जाती है। दादा तो भूरी से ही पूछा करते—जब नेहरूजी ने भाषण दिया था तब पुलिस वाले सुन रहे थे या नहीं?

—सुन रहे थे ऐन।

—फिर अमल क्यों नहीं करते? देश के प्रधानमंत्री की ऐसी बेकदरी? पुलिस वालों को नरक में ठौर नहीं मिलेगा।

—वे तब ही तो नरक ही नरक बनाये दे रहे हैं दुनिया को। घूस मागते हैं।

—घूस? घूस तो कोई नई बात नहीं। वेद-पुराणों के

जमाने से चली आ रही है, पर आदमी के पास रुपया अधेली हो तो सही। घूस के लिये भी चोरी-चाकरी करनी पड़े तो लानत है हाकिमों की हाकिमी को। खतावारी कब तक आखिर? कोई इस शय से बचा ले, तब बात है।

भोले दादा चिमन सिंह! चिमन सिंह का बेटा सोबरन अपराध-बोध का मात हुआ...सोबरन की बहन मैत्रेयी कहाँ पली, कहाँ बढ़ी, कहाँ पढ़ी, कहाँ ब्याही, कहाँ पहुँची? इन तीनों के मन में न ज्यादा करुणा थी, न ज्यादा हमदर्दी थी और न ज्यादा वेदना...मगर कुछ था, कुछ ऐसा जो मनुष्य और मनुष्य के बीच अनाम, अनदेखा, अनजाना-सा कुछ होता है। कोई रहस्य-सूत्र कि किसी अपनत्व का जज्बा, जो भूरी ने पास बैठ-बैठकर कि भाईचारा दिखाकर पैदा कर दिया था। उसी के कारण कि कबूतराओं के बांके शौर्य के कारण दादा ने कुछ धरती उनको देनी चाही थी। गाँव के किसानों जैसे किसान राजा काका बल्लियों उछले और अपनी टेक पर जा गिरे—केस लड़ाई में काम आये थे कबूतरा तो क्या करें? बैलगाड़ी में बैल काम आये तो उसको भी खेती-पाती देनी होगी?

'कबूतरा जन्म-जन्म के खानाबदोश...' सोबरन कराहकर रह जाता।

गृह-कलह और आपसी विरोध के बाद जब भाइयों में सुलह समझौता हुआ तो तय था कि ढाई बीघा जमीन, जो फसल के हिसाब से कहीं आती ही नहीं, भूरी को दे दी जायेगी। अब तक पथरीली ऊँची-नीची धरती पर डाले डेरे उखाड़कर भूरी समतल पर आ गयी। भूरी क्या थी, पूरी एक कबूतरा बस्ती की संगठनकर्ता।

इलाके में चिमन सिंह के विरोधियों ने अफवाह फैला दी कि अब वे अपराधी पालने पर उतर आये हैं। मुजरिमों को शरण देकर जुर्म कर रहे हैं, सबसे पहले इनको पुलिस पकड़े। बहुत से किसानों ने इस बात का समर्थन किया क्योंकि कबूतराओं की छापामार लड़ाई से किसानों को गुजरना पड़ता है। दादा चिमन सिंह का यह रवैया गांवों में गलत मोड़ ले गया। लोग आपसी रंजिश, डाकुओं के आतंक और यहाँ वहाँ दुश्मन से निपटने के लिये कबूतराओं को काम में लेने लगे। बदले में बुरी जगहों पर इन खानाबदोशों को बसने दिया। स्थाई-अस्थाई बसीले बनाने में भी मदद की। साथ ही चौकन्ने भी रहे क्योंकि यह धारणा मजबूत थी कि कबूतरा कज्जाओं (बड़े समाज के लोगों) के यहाँ सेंध लगाने का मौका चूकना अपनी भूल या अपमान मानता है। किसानों की यही धारणा पुलिस का मौन समर्थन करती है। लगता यह है कि जैसे यह भी पुलिस, प्रशासन और राजनेताओं की गोपनीय रणनीति हो। देखा यह भी गया है कि यही नीति किसानों द्वारा कबूतराओं का खात्मा कराती है।

1952 में मिले 'विमुक्त' नाम का लाभ जातियों को नाममात्र के लिये मिला, क्योंकि जिस तरह इन लोगों को अंग्रेजों ने 1871 में अपनी सरकार के तहत जन्मजात अपराधी करार देकर बाँधा और 1910 तथा 1920 में वह बंधन पुनः पुनः जांचा, उसी तरह किसानों के समाज में भी इन जातियों की गतिविधियों पर तयशुदा सीमा लागू रही। प्रतिबंध वही था कि वे मनुष्य रूप में जन्मे लोग मनुष्य की तरह रहने, खाने और नित्य क्रियाओं तक की हफ्तेदारी देने की लाचारी उठाते रहे। साथ ही सदियों से चली आ रही कुगाथायें—कि ये बर्बर हैं, निरंकुश हैं, जंगली-हिंसाप्रेमी हैं। नतीजन समाज की अमन-शांति के दुश्मन हैं। इनका सफाया जन-जन के हित में है। डाकू उन्मूलन अभियान के आगे-पीछे और साथ-साथ इनको मार गिराने की मुहिम बराबर चल रही है, क्योंकि ये डाकुओं के सहायकों की भूमिका में उतर चुके हैं।

—घूस? घूस तो कोई नई बात नहीं। वेद-पुराणों के जमाने से चली आ रही है, पर आदमी के पास रुपया अधेली हो तो सही। घूस के लिये भी चोरी-चाकरी करनी पड़े तो लानत है हाकिमों की हाकिमी को।

दादा चिमन सिंह की समझ में कुछ न आता तो वे भूरी कबूतरी के साथ ही सलाह-मशवरा करने बैठ जाते—भूरी, किस जन के लिये किस जन का सर कलम करना जरूरी है? पुलिस के लिये? लायसंसशुदा ठेकेदारों के लिये? डाकुओं के लिये इन अवैधों को शिकार भी बनाना होगा! कानून भलाई के लिये बनते हैं, पर भलाई में से छन-छनकर कपट और भितरघात बहे चले आ रहे हैं। कबूतराओं की हालत खराब हो रही है। हम लोगों की खताओं पर कबूतरा जेलों में

ठूँसे जा रहे हैं। ये कैसा सुराज आया भूरी ? भूरी की आँखों से सहमति के, कि भुक्तभोगी होने के दुख में कुछ आँसू टपकते और माहौल में मौन सनसनाने लगता।

हम छह आठ लोगों के समूह में ऐसे संवाद, ऐसी चिंतायें अक्सर सुना करते, पर उस संवाद का हासिल कुछ न था। यहाँ तक कि दादा गाँव में लखनऊ से आनेवाले आला अफसरों से कबूतराओं की बात चलाते। तब वे सभ्य शिक्षित और लकदक लोग हँसकर रह जाते। उनकी इस लापरवाही भरी अदा पर दादा अपने आप से शर्मिंदा हो उठते मानो वो अहलकार कह रहे हों—तुम गंवार बिना विचार और चिंतन किये खतरनाक बातों को भी खोलकर कहने की आदत डाले हुये हो।

रेत मिट्टी में रहने वाला किसान प्रशासकों के सामने कितनी हिम्मत कर सकता है ?

मगर, देखते ही देखते शहर के दफ्तरों से तमाम नीतियाँ बनकर आईं। उन नेक नीतियों को ध्यान में रखते हुए पुलिस ने चुस्त-चालाक व्यापारियों से गठबंधन किये, जिनकी शर्तों के हिसाब से 'शराब की बिक्री पर दिन काटती कबूतरियाँ' बारह बाट हो गयी। कच्ची शराब को अवैध घोषित करके लायसंसवाला शराब व्यवसाय-मैदान का अकेला खिलाड़ी रह गया। ऐसा तो होना ही था, होना चाहिये भी था, क्योंकि 'विमुक्त जातियों' के लोग तो हमारे अनुसार आज भी माथे पर जन्मजात अपराधियों की चिप्पी चिपकाये हुये है। ऐतियाद के लिये हम उस उखड़ने को बेताब चिप्पी के पीछे गोंद की जगह फैबीकोल लगा देना चाहते है। लाभ यह रहेगा कि बहिष्कृत लोगों को कभी सामाजिक रूप से व्यवसायिक लायसंस नहीं मिल पायेंगे।

सरकारी रहवासों की कहानी हमारी इस मानसिकता से इतर नहीं। उनमें जन्म-जन्मान्तरों के चोर, बदमाश, नामी लुटेरे और शातिर हत्यारों को कौन बसने देता, आखिर सामाजिक विधान भी तो कोई चीज है, जिसके तहत लोगों की चारित्रिक उत्थान की गारंटी रहती है। परबई दातार नगर की रिहाइशें अपवाद के रूप में बसीं भी। मगर विमुक्तों का रोज-रोज का उपवास उनकी आँतों को इस कदर छीलने लगा कि दुबककर, छिपकर भूखे लोग अपने पुराने धंधों को खोजने लगे। गजब यह कि इधर लूटपाट और राहजनी का बाजार गर्म हुआ और उधर विमुक्त जातियों के विकासीय आंकड़ों की धुआँधार पत्रिकाओं का आविर्भाव सामने आया। जनजाति-कल्याण, आदिवासी उत्थान जैसी तमाम संस्थाएँ कुकुरमुत्ता की फसल-सी जहाँ न तहाँ खड़ी हो गयी।

और यह तभी की बात है, जब नाथू डाकू के नाम पर रोशन कबूतरा मार गिराया था। मुठभेड़-एनकाउंटर के नाम पर पुलिस ने इनाम जीते थे। अब कोई नथुआ की आदत को क्या करे कि उसे डकैती की तलब उठ आई। किसी नादान पुलिस अफसर ने डकैती का पर्दाफाश किया, जिसमें तथाकथित मृत डाकू बाकायदा पांच लोगों की हत्या करके नकदी और जेवरों के साथ दो बंदूकें लेकर घाटी में उतर गया।

चिमन सिंह की समझ में अब साफ-साफ आ गया कि सरकारी तंत्र एक ऐसा राज है, जो अपने तयशुदा मकसद को किसी भी हालत में पूरा करता है। उन दिनों भूरी कबूतरी लगभग गूंगी-सी, दहशत की मारी पथराई आँखों से अपने 'स्त्री-पुरुषों' को देखती और भेड़िया-माता की तरह दम साधे रह जाती।

सरकार के नुमाइंदों को सफल होना ही होना है।

☆ ☆ ☆

मैं यहाँ अपने बहिष्कृत भाई को खोजने आई थी।

सोबरन अब तक बढ़कर जवान हो चुका था और दारू की गंगा उसके मुँह लगा चुकी थी। कुशल गोताखोर आखिर गया तो कहाँ गया ? लोग कहते हैं—कबूतरा बस्ती का वाशिन्दा हो गया! कौन होता है यहाँ का वाशिन्दा, लोगों की नजरों का काँटा! सोबरन को गाँव में हिकारत से देखा जाता है, घर साथ-साथ बदनाम होता है। हमारा घर दादा की हमदर्द आदतों और सोबरन की कबूतरा-बस्ती में बैठकी के कारण दागदार हुआ है। राजा काका जैसे इन दोनों का प्रायश्चित करते हों, कबूतराओं को पीटने और बेगार के लिये पटाने पर लगे रहते हैं। आखिर ढाई बीघा परती खेती ने ही गजब ढाया है न। नहीं तो ये खानाबदोश अब तक कहाँ के मारे कहाँ चले गये होते। हमारा गाँव पाक-साफ और घर गंगाजल छिड़ककर पवित्र कर लिया होता। सोबरन को भी राजा काका तीर्थ करा लाये होते। गांव को पंगत देकर उसे घर में

मिला लिया होता। तो बुरा मरा होता? कबूतरा-कलंदरों को तो खानाबदोशी की आदत रहती है। सदियों का विस्थापन इनका कुछ नहीं बिगाड़ पाया। जान हथेली पर रखकर पुनर्वास का हीला कर लेते हैं। उनका यह रोना भी नहीं कि सरकार ने क्या वादे किये थे, क्या दिया। छीनकर लेने वाला किसी के लिये-दिये को क्या समझेगा? झोपड़पट्टियों में बसने वालों को झींकते हुये देखकर ये हँसते हैं, खुले आकाश तले धूप, सर्दी, पानी ही सही, मिले तो सही।

दादा ने इनको धूप-सर्दी-पानी के साथ हवा का तोहफा दे दिया। दमन तो अब निश्चित ही बढ़ेगा। इस बलिदानी समूह ने भी कसम खाई है कि इस सरहद पर ही रहना है। क्या इन्हें यकीन है कि सोबरन का लहू इनकी जीवन-रेखा से जा मिला है? पुलिस इनकी रिहाइशों से रंजिश रखती है, किसान भी रास्ता देने को तैयार नहीं, तो फिर कोई अहिंसा में हाथ बाँधकर कैसे बैठा रहे? कहते हैं कि पिछले दिनों भयानक टकराव हुआ। ठेकेदार और पुलिस का शामिल हमला था, उधर सोबरन कबूतराओं के साथ हथियार उठाये खड़ा था। मारपीट हुई, बंदूकें चलीं। लोगों की गिरफ्तारी हुई। लोगों माने कबूतरा।

तो आओ।

चलें, उन आदिम बर्बर मनुष्यों के पास, जो विकासमान भारत के तकनीकी भविष्य के चलते सुविधाओं पर सुविधायें जुटाने वाले समाज के आनंदलोक में दहशत पैदा करते हैं कि उन समुदायों के काफिले सुचारित समाज में भद्दे धब्बों के रूप में प्रकट हो पड़ते हैं। ये सुंदर गलियों में बदबूदार पानी की नालियों से, प्यास से परेशान। आओ चलें वहीं, जहाँ सैकड़ों समाजशास्त्री इनकी छवि अपने थीसिसों के पन्नों पर उतार ले जाते हैं और उनकी दशा सुधारने के लिये दिशायें खोलने के भरोसे देते हैं। ऐसे अचानक, अपरिचितों की भीड़ पर ये 'विमुक्त' अपनी आजादी का भार डालकर सुख की नींद सो सकते हैं? मुझे लगता रहा कि लोग तो क्या, यह जमीन भी, जिस पर वे अपनी जिदंगी बसर कर रहे हैं, उन्हें हत्या के लिये ही बाँधे हुए है। सैकड़ों वर्षों से वे इस हालत में नहीं कि अपनी जुबान खोल पायें, मनुष्यों की तरह हाथ-पाँवों का इस्तेमाल करें। जब कि समाजशास्त्री उनसे संगठन और आंदोलन की उम्मीद लगाते हैं और वे हैं कि खूँटे से खुले ठोर की तरह खूँटे के इर्द-गिर्द रहकर ही सुरक्षा महसूस करते हैं, क्योंकि जितनी भी जिंदगी मिली, यहीं मिली। जैसा भी जीवन रहा, यही रहा। शहर के पास जायेंगे, मारे जायेंगे। हर हाल में लूटने के लिये ये कुख्यात लुटते रहते हैं। बर्बर दरिंदे पिट-पिटकर सख्त हो गये हैं। वे अब लड़ने के अलावा किसी भी अभ्यास के लिये नहीं सोचते। पहचानते हैं तो मित्रवत दारूबाजों को।

मैं आगे बढ़ती जाती हूँ, कुत्ते से सामना होता है।

कुत्ता को एक बच्चा जोरदार महीन आवाज निकालकर हुलकारता है—लोड, लोड! और कुत्ता हमला करने झपटता है। अतरसिंह कबूतरा उसके जबड़ों को अपने हाथों में न भींच ले तो वह मुझे फाड़ खाये।

मैं हाँफ-हाँफ कर बेहाल हुयी जाती हूँ। बबूल के नीचे जमीन पर बैठी, आगे जाने का इरादा काँपता है। मौके से सोबरन की कही बात याद आती है—तुम्हारी भौजाई ने हमें यहाँ आने से रोकने की खातिर कबूतरा बच्चा पर कुत्ता छोड़ दिया था जिज्जी। तुम जानो कबूतरा कुत्ते से डरेगा? लड़का चिंथचिंथकर भी करतब दिखा रहा था।

कुछ गजों के विस्तार में बसी बस्ती के कुत्ते, बिल्ली, चिड़िया, कौआ भी कबूतरा हो गये हैं, क्योंकि वे उन्हीं स्थितियों से जूझते रहते हैं, जो कबूतरा को मिली हैं। हमारी यात्रा को बस्ती के हर जीव-जानवर और मनुष्य ने कोसा है? मैं जीप से नहीं आई, क्योंकि जीप से लायसंसशुदा ठेकेदार आते हैं। मैं युवराज (भाई) की मोटर साइकिल की पिछली सीट पर बैठने को तैयार नहीं हुयी, क्योंकि मोटर साइकिल से पुलिस आती है। ट्रैक्टर से भी जाना उचित नहीं समझा, क्योंकि ट्रैक्टर समर्थ किसानों के पास होता है, जो असमर्थों का हौसला तक जोत डालते हैं।

गाँव में भाई-भतीजों ने कहा था, बैलगाड़ी से मत जाना, कबूतरियाँ उसमें अनाज समझकर टूट पड़ेंगी। काश कोई यह भी कह देता कि कबूतरियों की तरह पैदल मत जाना, पैदल को कुत्ते रौंद लेते हैं।

सफर जहाँ से शुरू किया था, वहीं खत्म कर दिया। अगले दो दिन तक सदमे में पड़ी रही। सपने में भी हमलावर कुत्ता छाया रहा। उसका तेवर रगों में दौड़ते खून में खलबली मचाये रहा, जब कि कुत्ता तो अपनी उसी सीमा में था, जो

कबूतराओं के लिये तय की गयी है। मगर पशु की इतनी नफरत, इतनी घृणा बर्दाश्त के काबिल न थी। इस तरह के हालात में यदि मैं दो असमान समाजों के भाईचारे का सपना देखूँ तो वह शेखचिल्ली के सपने से ज्यादा नहीं। आशंका और आतंक की आग पहाड़ के चारों ओर सुलग रही है। लोग जी नहीं रहे, जीने का नाटक कायरता के साथ निभा रहे हैं।

काश नेहरू जी ने यह मंजर अपनी आँखों देखा होता। हैलीकॉप्टर से ही सही, आकाश की राह धरती पर आते तो पता नहीं अपना ऐसा भाषण दे पाते या नहीं—अपराधी जनजाति के इस प्रावधान को लेकर मैं चिंतित हूँ, यह नागरिक स्वतंत्रता का निषेध करता है—अगर व्याख्यान में आजादी की बातें कह भी दीं तो बाद में देखना था कि उनका कहना-समझाना एक सुधारवादी आदेश के रूप में फाइलों में दर्ज होकर बंद है, बस।

विमुक्त जातियों का आधार प्रधानमंत्री का भाषण गणित का रूप ले गया। इस गणित के कर्त्ता-धर्ता बड़े समाज के मानव रूपी गिद्ध बने।—यह मैं क्या सोच रही हूँ? कि अपने आत्मीय जनों में शामिल दतिया के० बी० एल० पांडेय, झांसी के मदन मानव, खिल्ली, मँड़ोरा खुर्द के देवीदयाल और कबूतरा जनजाति पर शोध करने वाले प्रो० पी० आर० शुक्ल के साथ मिलकर सुधारवादी नीति की बख्यिा उधेड़ रही हूँ। आँकड़े देखते हुये लगता है, खिल्ली, मँडोरा खुर्द की कबूतरा बस्तियाँ विभिन्न नामों से पूरे देश में फैल गयी हैं। इन बस्तियों के ऊपर चीलें उड़ रही हैं, नीचे गिद्ध घेर रहे हैं, वे उनको खींच-खींचकर वहाँ ले जा रहे हैं, जहाँ एक ही दौड़ देकर उन्हें रौंद लिया जाये।

आखिर छह करोड़ जन्मजात अपराधियों को विमुक्त मनुष्य बनाना है। मेरे सामने कच्ची मिट्टी के घरौंदों का उजड़ा हुआ दृश्य फैलाता है, जो बचपन से देखती आई हूँ। प्रतिकूल स्थितियों में किसी संपदा के बिना, समाज की, सरकार की और मान्यता प्राप्त अपराधियों की दी हुयी यंत्रणाओं के बरक्स जीवित कैसे रहा जाता है, यह हुनर बस्ती के शकरकंदी जैसे बच्चे भी सीख लेते हैं। जिंदा रहने की कहानी संसार में सबसे बड़ी कहानी होती है, क्या इसी रचनात्मक प्यास ने मेरा गला सुखा डाला और मैं उन प्यासों के पास बार-बार भागी जिनके सपने में निर्विघ्न तालाब, निर्द्वन्द्व कुएँ और सदाबाहर हैंडपंप आया करते हैं। जबकि जानती यह भी थी कि हमारे समाज की औरतों का यहाँ आना हेय है, जैसे इस समाज की औरत का गाँव-बस्ती में जाना निषेध है।

चलते हुये फिर टाँगें थरथराती हैं। हाथ में थमा कलम-कागज काँपता है। कैसा निर्भय था बचपन, जब इस पवित्र पहाड़ को पूजने लड़कियाँ आया करती थीं। पहाड़ की तलहटी में बना माता का मंदिर मानवता की रक्षा का प्रतीक था। हकीकत ने ऐसी आँधी उठाई कि मन के देवता अन्तरध्यान हो गये। स्थिति यहाँ तक आ गयी कि अस्तित्व मजाक बनकर रह गया।

पर देखती हूँ कि सामने कबूतरियाँ मेरे स्वागत में मुस्कुरा रही हैं। रंग-बिरंगे ऊँचे घाघरे, कमीज की सलवार और छोटी-सी कुर्ती वाली प्रोशाकों में उत्सुक आँखों से यह जता रही हैं कि उनकी ईमानदारी असभ्यता नहीं। अब थोड़ा फरेब, थोड़ी कुटिलता तो मौसमों की मार से टनटन करते बदन और वंशानुक्रम से मिला जहरीला स्वभाव तो हैं ही, मनुष्यगत कमजोरियाँ। सबके बावजूद आदमी-आदमी की प्रतीक्षा करता है।

तो मेरा इस बस्ती में आना विफल नहीं हुआ?

पर लिखूँगी क्या? पानी नहीं है, सिर पर छत का साया नहीं है, रोटी जुटाने के लिये, आजीविका...इसे पढ़ने में कितनों की दिलचस्पी होगी? गरीबी की सीमारेखा के नीचे रहने वालों की मांगे इतनी घिसपिट गयी हैं कि नजर के नीचे होती हुयी सिर के ऊपर से निकल जाती हैं। स्कूल-अस्पताल के साथ डाक-व्यवस्था के मुद्दे कितनी- कितनी बार? कोई

काश नेहरू जी ने यह मंजर अपनी आँखों देखा होता। हैलीकॉप्टर से ही सही, आकाश की राह धरती पर आते तो पता नहीं अपना ऐसा भाषण दे पाते या नहीं—अपराधी जनजाति के इस प्रावधान को लेकर मैं चिंतित हूँ, यह नागरिक स्वतंत्रता का निषेध करता है—अगर व्याख्यान में आजादी की बातें कह भी दीं तो बाद में देखना था कि उनका कहना-समझाना एक सुधारवादी आदेश के रूप में फाइलों में दर्ज होकर बंद है, बस।

एक गर्भवती औरत को प्रसव होनेवाला था। पानी लगे गेहूँ के खेत में औरत कराह रही थी। कराह को पकड़ती हुई पुलिस आगे बढ़ रही थी कि पुलिस को देखकर खेत में छिपे कबूतरा बच्चों के साथ एक कबूतरी ने पत्थर मार-मारकर पहले पुलिस को घायल किया, आगे कोई पेश न चली तो कराहती हुयी गर्भवती को पत्थर मार-मारकर मौत के घाट उतार दिया।

आजाद भारत की सड़ती हुयी बस्तियों में कल्पवृक्ष कहाँ तक लगाये ? धन और संसाधनों की सीमा बस्तियों की वरीयता पर शेष हो जाती है।

ये जवान, बूढ़ी कबूतरियाँ, अपनी भाषा में कचर-पचर करने वाली औरतें, ईदगिर्द घिर आई। अब दूरी कहाँ ? सवाल बुंदेली मिश्रित खड़ीबोली में दागती हैं कि मेरी बोलती बंद हो जाती है—तू क्या देगी हमें ? अपने मर्दों को हमारा पता देगी ? हवालात जेल और सजा से हम नहीं डरते।—शराब की धधकती भट्ठियों के पास से तरह-तरह की आवाजें उठती हैं—मैं घिरी हुयी हिरनी की-सी निष्ठुर आँखों से देखती रह जाती हूँ। क्या यहाँ से बचकर मुझे जाने नहीं देंगी? अदृश्य काँति (गोश्त काटने का हंसिया) हवा में लहरा रही है। भागना कहाँ से होगा? सामने शराब के छने पानी से बने कीचड़ की नीली रंगत और खट्टी बदबू का तीखा क्षेत्र है। हाथों-पाँवों पर मक्खियाँ छत्तों की शक्ल में चिपक गयीं।

''घड़ा फोड़ जाते हैं तेरे भइया-भतीजे। सखस्स लुट जाता है हमारा। देह के लत्ते नोंच ले जाते हैं आदमी। नंगे जाने-आने की लाज पीछा नहीं छोड़ती। री भूखे रहते हैं। छिपे रहने की सजा काटते हैं। हमारी सजा कज्जा लोगों की सजा जैसी नहीं, कि खत्म होने पर आये।''

''डेरों पर कोई आदमी नहीं है ?'' मैं पूछती हूँ।

''तमाम आ रहे होंगे'' कहकर एक अधेड़ गोरे चेहरे वाली स्त्री हँसती है। हँसने का मकसद क्या है, मैं समझ जाती हूँ—वह मेरे भइया-भतीजों, गाँव के नौजवानों पर हँस रही है। जता रही है कि कज्जा लोगों का धर्म उनके समाज और राजनीति में शुद्धता का बोलबाला है, इसलिये ही वे सब शुद्धता के खाते में डाल रखी हैं। अशुद्धों से छिपकर ही मिला जा सकता है। क्या स्त्री की योनि कभी अशुद्ध नहीं होती ?

छोड़िये इस बहस को। मैं सकुचाने लगी हूँ क्योंकि मेरे मन पर वे अत्याचार खुदे हुये हैं, जो कबूतरियों की देह से गुजरते हैं।

''तुम्हारा नाम क्या है ?'' मैं पूछती हूँ तो वह नाम बताने की जगह हँस पड़ती है। नई उम्र की नई लड़की अपनी अधेड़ माँ को कोहनी मारकर हँसने से रोकती है।

''अपनी बोली में गीत लिखवा दो।''

''गायेगी हमारा गीत ? तू कैसे गायेगी ? तेरी समझ में क्या आयेगा ?''

''री पानी पी ले और जा अपनी गैल।''

एक लड़की गिलास में पानी लाती है। मैं प्यासी होने के बावजूद पीना नहीं चाहती, क्या पता पानी के बदले दारू हो। मैं कज्जिन, इन लोगों के हाथ का गंदा-संदा पानी...नहीं नहीं। मैं पानी भरा गिलास लौटा देती हूँ।

''उठ तो फिर। हमारे गाहक आने का टैम हो गया। तेरे लिहाज में पियेंगे नहीं। कज्जा बड़े पाखंडी होते हैं। जा तू, उठ यहाँ से'' एक मजबूत लाल मुँहवाली स्त्री मेरी बाँह पकड़ लेती है। झटका ऐसा लगता है कि बाँह उखड़ आयेगी।

धिक्कारती हूँ खुद को। इस जाति—इन समुदायों को किसकी पैरोकारी की जरूरत है ? ये चाहें तो दुनिया भर की धरती पर अपना नाम लिखे दें। रोज टूट-टूटकर बननेवाली ये स्त्रियाँ कड़ी से कड़ी होती जाती हैं। मौके से मिलती-जुलती एक हमलावरी याद आ गयी कि स्मृति हिल उठी—होली के दिन थे। खेतों में गेहूँ की फसलें थीं। पुलिस और ठेकेदारों का हमला हुआ था। एक गर्भवती औरत को प्रसव होनेवाला था। पानी लगे गेहूँ के खेत में औरत कराह रही थी। कराह को पकड़ती हुई पुलिस आगे बढ़ रही थी कि पुलिस को देखकर खेत में छिपे कबूतरा बच्चों के साथ एक कबूतरी ने पत्थर मार-मारकर पहले पुलिस को घायल किया, आगे कोई पेश न चली तो कराहती हुयी गर्भवती को पत्थर मार-मारकर मौत के घाट उतार दिया। ऐसा सुना था, तब विश्वास नहीं हुआ था। इनके पास आने-जाने के दौरान उस घटना का सत्य मेरे भीतर बादलों सा फटने लगा। उठकर चल नहीं सकी मैं, मिट्टी के भीगे ढेले सी बैठी रह गयी। अकेली चुपचाप। बैठे-बैठे दिन ढलता है। बस्ती में ज्योंनार का इंतजाम चल रहा है—उबले अंडे, उबले आलू, नमक-मिर्च और प्याज।

मैं अपने पास से गुजरती कबूतरी कदमबाई को आशा भरी नजरों से देखती हूँ, क्योंकि वह भी मुझे कनखियों से

देखती है।

—अपने गीत सुनाओ न।

—री बीबी, बोली पानी खोल देंगे तो धंधा कैसे करेंगे? हमारी बोली ही तो हमारी खेती-क्यारी है।—कहने का आशय मैं समझ गयी। उसने जताया यह भी कि आज हालत ऐसी है कि एक सनक भरी दुनिया सामने है, जिसका कोप गुस्सा तो अपनी जगह, उसकी हमदर्दी पर शक जागता है, परोपकारिता से डर लगता है।

मुझ कज्जिन से अपनी बोली छिपाकर कबूतरियों ने अपने हथियार बचा लिये। हालाँकि तरह-तरह की आवाज रूपी साइरन-खुशी के, लूट के, खतरे के इशारे होते हैं, यह मैंने कहीं तक जान लिया था।

☆ ☆ ☆

डाल-डाल और पात-पात का खेल।

एक दो नहीं, पूरे तीन साल बाद फिर आमना सामना हुआ। सोबरन परेशान क्योंकि मैं कबूतराओं की संवेदना की मारी हुयी। उसका हश्र कि इन दुश्मनों के कारण ही घर से बहिष्कार पाया, समाज से कटा, बहन को इस रास्ते चलाकर जीजा से दुश्मनी मोल लेने का खतरा। पति सोबरन से कह गये थे—अपनी बहन का पागलपन न बढ़ाओ। दुर्भाग्य तो यह भी कम नहीं कि मैंने पढ़ी-लिखी से ब्याह किया था और कल्पना की थी कि हजारों लाखों गँवार स्त्रियों की तरह यह जड़ भी सलीकेदार बेल का रूप ले लेगी। पर इस की जड़ें तो नीचे-नीचे पाताल की ओर...

हे भगवान! सुख-सुविधा और इज्जत आबरू के लिये माना जाने वाला घर कबूतराओं की गंध पाते ही चौकन्ना हो उठा।

'मेरा क्या होगा', काश यह बात ध्यान में बनी रहती तो यह अभागा दिन जीवन में क्यों जगह लेता? दतिया के पास की कबूतरा बस्ती का एक कबूतरा मारा गया। वह मड़ोरा खुर्द के डेरों की कबूतरी का आदमी था। लड़की लाश लेने के लिये थाने बुलाई गयी। वह वारदात वाली जगह ले जाई गयी। लाश के सामने खड़ी की गयी।

''पहचानो''

लड़की का चेहरा थर्राया, फिर करुण होने लगा। नाक पर नामालूम सी हरकत हुयी और सिर बुरी तरह हिला। होठों से चुपचाप निकला—यह मेरा आदमी नहीं है।

लड़की अब बस्ती में थी। चेहरे पर शोक नहीं, दुःख नहीं, आँखों में लाल रक्त खौल रहा था। किससे खफा थी? अपने पति से, जिसने अपनी बहन को छेड़ने वाले कज्जा से हाथापाई की थी। बदले में मौत पाई। संभवतः वह लड़की अपने पति के शौर्य पर उत्तेजित थी, या उसका आदमी उन बेकसूर कबूतराओं से ज्यादा महत्वपूर्ण था, जो जन्मजात अपराधी के नाम पर मार गिराये जाते हैं।

नहीं, उसका पति कज्जा लोगों से लुक-छिपकर नहीं, बराबरी की जंग में मरा है। उसके अनकहे शोक में गर्व की लकीरें घुलमिल गयीं। यह दीगर बात है कि पति की लाश पहचान कर वह अपना और अपनी बस्ती का पाँव थाने में फँसाना नहीं चाहती थी। एक लाश के पीछे न जाने कितने मारे जाते या कैद काटते।

मैं चलने को उठी।

न जाने कहाँ से प्रकट हुये कबूतरा जवान ने सामने आकर कहा, ''चल दी? कापी पर कुछ नहीं लिखा?''

''नहीं'' मैं खड़ी होकर सिर हिलाती हूँ।

''आओ, हम लिखाये देते हैं। यहाँ चौड़े में क्यों बैठी हो, कोठे में आराम से बैठो। अरे हम क्या इंसान नहीं?'' वह हिन्दी में सम्भलकर बोल रहा था।

मुझ अंधी को क्या चाहिये? दो आँखें।

उस युवक की मजबूत पीठ वाली कद काठी के पीछे-पीछे चल दी। नये विरवे की शाख जैसी पिंडलियाँ आगे बढ़ती हुई...मैं मरने वाले बांके जवान की सोगवारी में, उस जीवित की जांबाज कल्पना में, ऐसे कबीले में प्रवेश ले रही हूँ, जिसके बहुत से रहस्य खुलने को हैं। खून और कौम के रिश्तों में बंधे लोगों का समूचा संसार देखने को उत्सुक मैं, उनकी गुलामी यंत्रणा ओर बदकिस्मती में भागीदारी के आशय से बढ़ी चली आ रही थी। उनसे एकाकार होती हुयी सोच रही थी—सच में ही लाश लेना इसलिये भी पसंद नहीं करते कि मुर्दा इनकी आत्मा को, शरीर को और मन मस्तिष्क को कुछ दिनों के लिये बेदम कर डालेगा, जो इनके चौकन्ने जीवन को रास नहीं आने वाला, क्योंकि आराम इनकी जिंदगी में नहीं और सुस्ती मौत में नहीं। मेरे भीतर खोखली सी हँसी गूँजी—किसी एक देश की संख्या से ज्यादा जनसंख्या का ऐसा जीवन किस लोकतंत्र में है? —पास ही बँधी बकरी यकायक मिमिया उठी। मैं चौंकती हूँ।

मैं नोट करती हूँ—

एक खाली कोठा। जमीन पर टाट बिछा हुआ। कोने में एक कुल्हाड़ी और तीन चार डंडे। बाकी कुछ नहीं। थोड़े से मैले चिथड़ों की अलगनी पर सजावट। यह रहन-सहन अपने आप में विशिष्ट है। भूमि से, जल से, यहाँ तक कि आकाश

और हवा के आजाद इस्तेमाल से वंचित समाज का आइना और कैसा होगा?

—री बोल, क्या लिखेगी—युवक की बोली में बदलाव है।

कमरे की किवाड़ें भिड़ी हुयी। मेरे मन में जो घटा, चेहरे पर छा गया। भय और आशंका की परतें, स्थिति काबू से बाहर जा रही है। लगभग मेरे बेटे की उम्र के इस युवक की आँखों में आखिर क्या है?

—री लिख, पहले हमारे पुरखे डटे और पिटे, अब यह चीज वह नहीं रहेगी।

—क्या होगी?

—देखती जा।

मेरे मन से शान्ति जा चुकी, आशा भी साथ छोड़ रही है। यहाँ प्रेम की कौन सी बात कहूँ? ऐसा समय फिर कब मिलेगा? समय धीरे-धीरे जा रहा है। मैं अपने मन मुताबिक कबूतराओं के बीच बैठी हूँ। लगता है कि उस युवक को सोबरन के रूप में छू लूँ जिससे अपने साथ उसके होने का बोध हो। ऐसे ही एक से एक मिले, समूह और कतारें बन जायें। लेखिका के अपने मंसूबे आकार पाने की आकांक्षा में लहरों से उठते और युवक तक पहुँच जाते। वह जोर से बीड़ी का कश खींचता। माथे पर आये घुंघराले बालों को एक हाथ से पीछे करता हुआ कोई सामग्री इकट्ठी कर रहा है। वह एक सपना था कि मैं आसमान में गोते लगा रही थी? कैसी अद्भुत मनोकामना कि इस बस्ती का पिंजड़ा तोड़कर कबूतराओं को उड़ा ले जाऊँगी और उन भगवानों के सामने खड़ा कर दूँगी, जो स्वतंत्र भारत के कर्ता धर्ता की कमान संभाले हुये मधुमय देश के छोटे से हिस्से में जिदंगी गँवा रहे हैं। पग-पग पर जलील होने वालों के लिये उनके निकम्मे कानूनों और लद्धड़ योजनाओं को ये अपने पाँवों से रौंदेंगे। हक नहीं, हिस्सेदारी भी चाहिये। रईस किन लोगों का नाम है, सम्भवत: किसी इंसान का नहीं। मैं ऐसी ही न जाने कितनी बातें अनकहे ही उस युवक से करती रही। और अंत में—

—री तू डर रही है?

—हाँ।

—धत् कज्जिन! —वह भद्दी सी हँसी हँसा।

—लिख तू जल्दी लिख।

जो कुछ लिखाया, अंत में उसका अर्थ समझाया कुछ ऐसे अंदाज में कि मेरी घिघ्घी बँध गयी। अपनी बदरंग पैंट की जिप खोली और खड़ा हो गया। अपना लिंग पकड़कर बोला— ''फलाँ बोल का मतलब यह...।'' मैंने आँखे बंद कर लीं।

—री देख, नहीं तो...और 'कूँदा' जानती है? अपनी धोती ऊपर उठा। नंगी हो जा। दिखा कूँदा।

अब की बार मेरी आँखें पथरा गयीं और उसकी आँखों में आग लपलपा रही है। मामूली सा कबूतरा लड़का! सोबरन की बहन को कैसी मुसीबत में डाले हुये है? मैं अपनी झुकी पलकों के नीचे से उसको देख रही थी। पतले चेहरे वाले हमलावर कबूतरा के सामने खामोशी की पीड़ा से गुजरती हुयी, सोचती हूँ कि धरती में दरार हो जाये, मैं उसमें समा जाऊँ। वदन में खुश्क काँटों की फसल फूट उठी है। मैं मृत आत्मा की तरह हवा में मिलकर अदृश्य हो जाऊँ क्योंकि मैं स्त्री, स्त्री की तरह अब अपने आपको बचा नहीं पाऊँगी। ओ शिव शंकर तुम यहाँ कहाँ होगे?

निर्वस्त्र शिव सामने खड़ा है, जिसके हाव-भावों में विभत्स सा आनंद छाया है। बिल्कुल ऐसे, जैसे अपनी औरतों के अपमान का जहरीला दर्द इसकी रग-रग में लहरा रहा हो। वह आगे बढ़ता है। मेरी चीख होंठ चीरकर फट पड़ती है।

''हैऽऽ, तू कज्जा हो गया रे...''

कितनी देर बाद मुझे होश आया। औरतों का समूह मेरे इर्द-गिर्द घिरा था। मैं घुटनों में मुँह दिये एक कज्जा स्त्री, जिसकी सभी इंद्रियाँ ऐसी तकलीफ से छटपटा रही थीं, जिसकी चिंघाड़ असह्य थी। होठों में बंधा भिंचा स्वर...अपने गाँव की हजारों स्त्रियों में से एक अलग छिटकी हुयी अभागी स्त्री...आँखों के सामने सूरज से लाल-लाल गोले घूमने लगे। ऊबड़-खाबड़ रास्ते के सफर में मैं मुँह के बल गिरी हूँ। मुँह-माथा लहू लहू...। एक कज्जिन के खून के चंद कतरे...कोई भी बता सकता है कि इस बस्ती को मरघट में बदल सकते हैं। भद्र पुरुषों का टीसता अहंकार कबूतरियों को इस सीमा तक उधेड़ सकता है कि कपड़े पहनना भूल जायें। नरसंहार का नाम आजकल जन संघर्ष है।

कबूतरियाँ भौंचक। घबराई हुयी।

अचानक एक बीस वर्षीय लड़की आगे बढ़कर मेरा चेहरा अपने हाथों में ले लेती है। इस सन्न-अवसन्न स्थिति में लड़की की चेतना जागृत क्या हुई, कबूतरियों ने मेरे पाँवों

पर सिर झुका दिये। मेरा माथा चकरा रहा है।

मैं भावुक हो रही हूँ या सदमे के कारण सारी ताकत क्षय हो गयी ? गुस्से का गोला आँखों में पिघल आया। मारे गये कबूतरे का बदला था यह ? या उसकी बहन को छेड़े जाने की सजा? संभवत: मेरे सोबरन जैसे भाइयों द्वारा कबूतरियों का अपमान होता रहा है, जो इस बस्ती में नासूर की तरह बढ़ता रहा।

क्या हमने इस तरह किसी कबूतरी को अपने पुरुषों से बचाया है ? लानत आती है अपने बचाव पर। झुके हुए शीशों के आगे मैं नतमस्तक हूँ। अल्मा नाम की एक बीस वर्षीया लड़की से मैं इस कदर गुँथ गयी कि...उसके कंधे पर सिर रखकर...एक जुट भेट, अपने लिये थी या उसके लिये ? या कि अपनी सभ्यता के लिये, जिसमें नरसंहार और औरत की चीड़फाड़ का जरूरी तत्व शामिल हो गया है, यही सभ्यता सारे देश में फैल गयी है।

मैं अब वह कहानी लिखने का मन बना चुकी थी, जिसमें तकनीकी विद्या से लैस इस तरक्की पसंद देश, जो पचास साल पहले अपनी आजादी का परचम लहरा चुका है, उस स्वतंत्र भारत में 'अल्मा कबूतरी' की कहानी क्या है ?

देख कबीरा रोया!

□ विजय गुप्त

[एक]

कबीर ने थानेदार से पूछा—
इस गरीब को क्यों मार रहे हो ?
यह चोर है। थारेदार गुर्राया।
नहीं, मैं चोर नहीं। मैं बादी जाति का हूँ इसलिये जब भी कहीं चोरी होती है, थानेदार हममें से किसी को भी पकड़ लेता है। मारता-पीटता है और चोर बना देता है।
क्या बादी होना चोर होना है ? कबीर ने पूछा।
बादी ही नहीं, सांसी, बावरिया, कंजर, पारधी होना भी चोर होना है। ये साले जन्मजात चोर हैं। अंग्रेज़ों ने 1871 में ही इन्हें 'जन्मजात अपराधी' मान लिया था। और 1952 में हमारी सरकारों ने भी इन्हें ''अभ्यासिक अपराधी अधिनियम'' के तहत चोर मान लिया । समझे तुम ?
चोर ये नहीं, तुम हो, तुम्हारा कानून है और तुम्हारा सिस्टम है...
कबीर और कुछ कहता उसके पहले ही सिपाहियों ने उसकी मुश्कें कस दीं।
कबीर दहक उठा और उसकी आंखें रक्तपुष्पों से भर गईं।

[दो]

जज ने हैरान होते हुए कबीर से पूछा—
तुम्हारा इन घुमन्तू अपराधियों से क्या संबंध है ?
हुज़ूर, यह जनजातीय लोग घुमन्तू इसलिए हैं कि इनके पास कोई ज़मीन नहीं है। जंगल और पहाड़ इनके घर थे। वहाँ से भी ये बेदखल कर दिये गये। आपका घर छीन लिया जाये तो आप भी घुमन्तू हो जायेंगे।
जबानदराजी मत करो कबीर ये असभ्य और जन्मजात अपराधी हैं। जज ने झुंझलाते हुए कहा। ये असभ्य नहीं, अशिक्षित ज़रूर हैं। अपराधी तो बिल्कुल नहीं।
क्या मतलब? जज ने पूछा।
इनके यहां जब लड़की पैदा होती है तब जश्न मनाया जाता है और आपके यहाँ लड़की की गर्भ में ही भ्रूण हत्या कर दी जाती है। इनके यहाँ शादियाँ होती हैं और आपके यहाँ दहेज की शक्ल में लड़के-लड़कियों की खरीद-फरोख्त। इनके यहाँ औरतें भी आजाद हैं जबकि आपके यहाँ ये आज भी जरखरीद गुलाम हैं। असभ्य और अपराधी ये नहीं आप और आपका तथाकथित संभ्रांत सुशिक्षित वर्ग है।
जज ने चीखते हुए कहा—
इस बदबख्त को जेल में डाल दो।
कबीर ठठा कर हँस पड़ा और उसकी आँखें तेजाब से भर गईं। ❖

छारानगर में एक दिन

[ब्रिटिश शासनकाल में 'अपराधी जनजाति अधिनियम, 1871' के अन्तर्गत अधिसूचित जातियों को कटीले तारों की घेरेबन्द दमनकारी बस्तियों में रखा जाता था। इन बस्तियों को 'सेटलमेंट' कहा जाता था। महाराष्ट्र-गुजरात के अनेक जिलों में ऐसी बस्तियाँ थीं। ऐसी ही एक बस्ती अहमदाबाद में वर्तमान छारानगर के निकट ही सरदार ग्राम रेलवे स्टेशन के पास स्थित थी। वस्तुत: इसी सेटलमेंट के तथाकथित अपराधी जाति के लोगों को वर्तमान छारानगर में बसाया गया है। कंजर जाति के इन लोगों का जीवन यातनाओं की कहानी है। तथाकथित अपराधी जाति के होने की वजह से अक्सर ही इन्हें पुलिस तथा प्रशासन के कोप का भाजन बनना पड़ता है। समाज के हाशिए पर रह रहे इन लोगों का जीवन आज भी घेरे में ही है। यद्यपि आज कटीले तारों का घेरा तो नहीं है परन्तु ये समाज से अलग-थलग अपनी बस्ती में ही सीमित हैं। जीवकोपार्जन के सभी संभावित रास्ते से वंचित होने की वजह से इनके पास कई बार शराब बनाने, चोरी करने इत्यादि के सिवा और कोई अन्य रास्ता नहीं रह जाता। छारानगर के जिस समाज में लगभग 30 प्रतिशत नौजवान औरतें विधवा हों, उनके बच्चे हों तथा जीवकोपार्जन के उनके सभी रास्ते सभ्य समाज द्वारा बन्द कर दिये गये हों तो भला हमारा यह तथाकथित सभ्य समाज उनसे जीवन जीने की कौन-सी राहों की कल्पना करता है।

*'बूधन' पत्रिका की ओर से हमने विगत 27 फरवरी, 2001 को छारानगर, अहमदाबाद की यात्रा की। उन लोगों के बीच एक दिन बिताया, भोजन किया तथा उनके दुख-दर्द को सुना। इस यात्रा के दौरान हमने छारानगर में जो दृश्य देखे उससे यह स्पष्ट था कि यहाँ के लोगों को न्यूनतम मूल-भूत सुविधाएँ जैसे पानी, सफाई, शिक्षा व जल निकासी आदि उपलब्ध नहीं हैं। हमारे साथी सूरज देव बसन्त ने उनके कुछ चित्र भी लिए हैं जो इसके विवरण के साथ दिए गये हैं। यहाँ के लोगों की व्यथा-कथा को हम पाठकों तक यथासंभव वैसे ही पहुँचा रहे हैं जैसा कि उन्होंने हमें बताया। उन्हीं लोगों में से एक थीं प्रांची श्यामजी बाई, उम्र 77 साल। प्रांची श्यामजी एक ऐसी महिला हैं जिन्होंने अपने जीवन के आरम्भिक दिन धुलिया (धुले) के सेटलमेंट में और शादी के बाद के दिन अहमदाबाद के सेटलमेंट में गुजारे हैं। 1952 में विमुक्त होने के बाद के अनुभव अन्य लोगों की बातों में भी झलकते हैं।— **सम्पादक**]*

अनिल पाण्डेय (अ० पा०)—दादीजी आपका नाम क्या है?

प्रांची श्यामजी बाई (प्रां० श्या०)—मेरा नाम प्रांची श्यामजी बाई है।

अ० पा०—यहाँ (छारानगर) आने से पहले आप कहाँ रहती थीं?

प्रां० श्या०—वहाँ पे (इशारा पूर्व सेटलमेंट की तरफ) रहती थी।

अ० पा०—वहाँ आप कैसे पहुँची?

प्रां० श्या०—वहाँ हम पहुँचे थे, हमारी शादी हुई थी। बचपन में तो हम घूमते थे। गधे पर बैठ कर घूमते थे। पहले तो जंगल में रहते थे बेटा। फिर सरकार ने हमको जेल में डाल दिया। अहमदाबाद, जलगँव सब जगह तार बांध कर हमें अन्दर डाल दिया। हमारे माँ-बाप धुलिए (धुले) में रहते थे। तो वहाँ मेरी शादी कर दिए तो मेरा आदमी इधर लाया। यहाँ एक बड़ा फाटक था। उसे देखकर मैं...नवी-नवी बच्ची बाहर की खाने-पीने, रहने वाली...उसे अन्दर डाल दिया। अब क्या करूँ। एक पुलिस बैठता था तो हम इक्की (शौच) करने
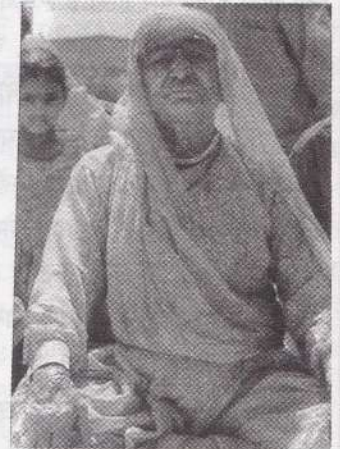
प्रांची श्यामजी बाइ

निकलते थे तो ससुर होता, जेठ होता और कोई देख रहा होता तो बड़ी शरम आती थी। पीछे पेशाब नहीं करने देते थे। पीछे-पीछे पुलिस आ जाती थी कि भाग जाएंगे। पर भागेंगे किधर? घर-द्वार अन्दर, बाल-बच्चे अन्दर। खाने के लिए भी कुछ नहीं। हम राव साहब (आंकी राव साहब—सेटलमेंट सुप्रिटेंडेण्ट) को बोलने के लिए जाते—साहब! भूखे मर रहे हैं। भूखे मर रहे हैं। तो वो क्या बोलता—'तो मर जाओ न!' ऐसा बोलता। फिर क्या करते हम...चोरी करते। चोरी को हम कैसे निकलते थे...तार बंधे थे, उसको हम काटते रात को। कुल्हाड़ी से मेरा आदमी काटता था। मैं भी जाती थी। कैरिया (आम) तोड़ कर लाते थे जंगल में से और घर में पका देते थे और वो खाते थे। बाल-बच्चे थे, कैसे भूखे जिएँ। हमारा आदमी कल्याण मिल में जाता था, साँचे चलाता था, कपड़े बनाता था। उसके पीछे एक पुलिस, क्योंकि चोरी करेंगे, जाती थी। चोरी करके भी पेट में डालना पड़ता है इंसान को। तो हमने ऐसा-ऐसा दु:ख उठाया और जब दूसरे गाँव को जावें, अभी जैसे कोई मर गया तो पुलिस साथ आती थी। अभी पुलिस का देखो,—मेरा बाप मर गया। एक धक्का दिया था अंकी राव साहेब ने। अंकी राव साहब, सिंघी राव साहेब से हम छुप-छुप कर काम करते थे। रोटी पकाते तो हम फूट कर बैठते। एक और बात बताती हूँ बेटा! एक बाई थी। उसके आदमी ने थोड़ी सी मारी थी। थप्पड़ तो मारते हैं इंसान, मरद की जात है, तो उसको पुलिस ने आदमी को गोली मार दी—औरत-मरद की राड़ में...।

फिर इन लोगों ने इधर हम लोगों को जमीन माप के दिया। फिर कभी चार घर छोड़े, कभी दो घर छोड़े। ऐसे छोड़ते-छोड़ते इधर लाइन लगा दी। यह समय कौन था? नेहरू...नेहरू के टाइम में हुआ। आजादी के पाँच साल बाद।

अ० पा०—आप के मायके में क्या होता था? अपने मायके के बारे में बताइए?

प्रां० श्या०—धुलिए में भी जेल में पड़े रहते थे। यही जेल धुलिया, भुसावल, जलगाँव सब जगह पे थे। हमारे जात के लोग जिस गाँव में भी थे, उसी गाँव का ऐसा किस्सा।

अ० पा०—आपके पूर्वजों ने क्या कभी बताया कि आप की जाति के लोग कौन हैं और कहाँ से आए हैं?

प्रां० श्या०—कंजर बोलते हैं।

अ० पा०—कहाँ से आए? आपके दादा-परदादा ने कभी बताया?

प्रां० श्या०—हमारा ऐसा था तम्बू तान देते थे। तम्बू तान के उसमें बाल-बच्चे लेकर पड़े रहते थे। सरकार देख लेती थी, अंग्रेजी राज था, उसको दया आई, चलो बहुत गरीब हैं, डालो अन्दर, एक जगह तो बैठेगा। गाँव-गाँव में माँगते फिरते थे। माँग के रोटी खाते थे। बहुत औरतों के अंग पर कपड़ा नहीं बराबर। क्या बोलना, बोलने में भी शरम लगती है। तो वही दिन जब सेटलमेंट में हमको डाला जब से जरा हमारे आदमी ने काम धंधे पर लगे न, तब चटनी रोटी चलती थी। तब भी चोरियाँ करती थी। करें क्या? (पुनः प्रश्न पर आते हुए) हम काठियावाड के हैं। कुछ राजस्थान से आए। कुछ लोग किधर चले गए—पाकिस्तान चले गए, कुछ लोग बनारस चले गए।

अ० पा०—दादी जी मैं यह पूछना चाहता हूँ कि जब आप घूमती थीं और बाद में जब सेटलमेंट में आ गईं, तो कौन सा समय अच्छा था?

प्रां० श्या०—समय तो यह अच्छा था। बैठ के खा रहे थे।

अ०पा०—क्यों, घूमते थे तो बहुत तकलीफ थी?

प्रा० श्या०—बहुत तकलीफ।

अ०पा०—और कोई पेशा भी नहीं था?

प्रा० श्या०—नहीं।

अ० पा०—आपके पिताजी कहाँ रहते थे?

प्रा० श्या०—नन्दुरवार में रहते थे। नन्दुरवार से लेकर धुलिए में डाला था।

अ० पा०—क्या नाम था पिताजी का?

प्रां० श्या०—मंजू राव कड़िया। चोरी करता था मेरा बाप। चोरी कर-कर के बच्चे पाले उसने। 12-13 साल की छोकरी थी मैं। मेरा आदमी मारता था, मेरे को दु:ख देता था। वो दु:ख देखकर बोलने को, फरियाद करने को कि मेरी छोकरी को मार रहा है उसका आदमी। इतना बोलने गया था मेरा बाप अंकी राव साहेब को। एक धक्का दिया अंकी राव साहेब ने और मेरा बाप खलास।

अ० पा०—क्या आपके आदमी हैं?

प्रा० श्या०—नहीं। आठ नौ साल हो गया उनको गुजरे।

अ० पा०—अब का समय कैसा है?

प्रा० श्या०—अब का समय जरा बैठ कर खाने का है। बच्चे लोगों की पढ़ाई-लिखाई हो गई। जरा अच्छा है।

अ० पा०—मैं जानना चाहूँगा कि क्या कभी ऐसा हुआ कि चोरी करके आए और पीछे-पीछे पुलिस आ गई?

प्रा० श्या०—हाँ-हाँ।

अ० पा०—तो क्या होता था?

प्रा० श्या०—बाप रे बाप, टंगड़ियाँ तोड़ देते थे। कितने लंगड़े हो गए बेटा। कितनों की आँख फूट गई, कितनों की नाक कट गई, कोई का दाँत निकल गया। तो हो जाता था। उसकी मौर...एक लाठी नहीं लिया जाए इंसान से। एक लाठी मारे तो खलास। वो हाल था पहले।

अ० पा०—जैसे आदमी भागा तो क्या औरतों की पिटाई करते थे?

प्रा० श्या०—पिटाई करते थे।

अ० पा०—जो भी मिलता, पिटाई करते थे?

प्रा० श्या०—जो भी मिलता पिटाई करते।

अ० पा०—लोग भागते थे?

प्रा० श्या०—लोग भागे न तो क्या खड़े रहें फिर। ऐसा हो जाता था। भागते आदमी भले पीछे औरतें रह जातीं तो बैठतीं घाघरे पसार-पसार के। झगड़ा कर-कर छूट के आतीं। बहुत धमाल करती थीं। हमारे आदमी पकड़े जाते थे, उधर तो औरतें जाती थीं छुड़ाने के लिए। पैसा कहाँ? तब छुड़ाने के लिए पैसा कहाँ? वकील ज्यादा पैसे माँगता। फिर औरतें-औरतें दस-बीस औरतें हो जाती थी। झगड़ा करके आदमी को छुड़ा के घर ले आती थीं। क्या होता था कि पुलिस किसी को पकड़ लेती थी तो औरतें जाती थीं। पुलिस वाले पैसा माँगते थे। वहाँ कुछ दंगे फसाद होता था। आखिर में अफसर आते थे और बोलते थे कि चलो ऐसा करो इनको छोड़ दो। इनकी औरतों पर केस कर दो। पैसे का लेन-देन हो जाता था। फिर क्या है, औरतें यहाँ आईं थीं, शक पे हमने पकड़ा है। चोरी-मोरी का केस लगा देते थे। इस तरह क्या होता था कि आदमी को बाहर निकाल देते थे और औरतों पर केस लगा देते थे।

(इस बातचीत में छारानगर की एक अन्य महिला जिनका नाम बाद में 'सोना' मालूम हुआ वहीं बैठी बातें सुन रही थीं, उन्होंने भी अपनी बातें बताई)

सोना—हमारे भी माँ-बाप यही बात बोलते थे। हम उस टाइम इतने तो बड़े नहीं थे। पर हमको ये सब बातें बोलते थे। और औरतें तो बहुत ही खतरनाक थीं। झगड़े में बहुत जुलूम

वर्तमान छारानगर-एक दृश्य

करतीं। पुलिस के भी साथ और आदमी के भी साथ। अपने मर्दों को बचाने के लिए चाहे कुछ भी कर लें।

अ० पा०—कृपया अपना नाम बता दीजिए?

सो०—मेरा नाम सोना।

अ० पा०—क्या आपकी शादी यहीं हुई है? क्या आपकी पैदाइश भी यहीं की है?

सोना—इधर की ही पैदाइश है।

अ० पा०—शादी-ब्याह भी आपका इधर ही होता है?

सोना— इधर भी, बाहर भी होता है, मगर अपने नात में। बाहर के नात में नहीं। बाहर के अपने नात से ही लड़की लाते हैं, शादी करके उनको देते भी हैं। लाते भी हैं। ऐसे हमारी नात बहुत है। जहाँ देखो वहाँ अपनी नात भरी हुई है। हमें छारा बोलते हैं। कहीं सांसी बोलते हैं कहीं कंजर बोलते हैं

अ० पा०—मतलब छारा, सांसी, कंजर एक ही लोग हैं?

संजय घमंडे—*(छारानगर का एक युवा कलाकार जिसने बूधन टीम की यात्रा को सफल बनाने में मदद की।)*— हाँ, लेकिन हमारा मुख्य चिन्ह भातू है—भातू-भातू। जैसे कि महाराष्ट में कहते हैं—कंजर भातू। लेकिन अगर कोई जाता है और पहचान नहीं पाए तो बोलेगा कि आप भांतू हैं। भातू हमारा मूल नाम हो गया। और सब हमारा क्षेत्रीय नाम है। जैसे कश्मीर में हमारे लोग हैं। दिल्ली में भी हमारे लोग हैं और वहाँ उन लोगों को सांसी कहते हैं। लेकिन हम एक दूसरे से बात करते हैं तो हम बोलते हैं कि क्या आप भातू हैं?

अ० पा०—दिल्ली में सांसी कहाँ हैं?

दक्षिण बजरंगे—*(छारानगर के युवक तथा उभरते लेखक-*

कलाकार।) शाहदरा, कड़कड़डूमा, कस्तूरबा नगर, मंगोलपुरी, गाजियाबाद इत्यादि में। इधर शिक्षा का प्रभाव बढ़ा है। दारू भी कम हुई है। चोरी यानी जो बुनियादी शिक्षा से आगे नहीं बढ़ पाते, बहुत से ऐसा लोग करते हैं। दारू और चोरी के पीछे ऐसा रहा है कि बहुत कम उम्र में शादी हो जाती थी। अब लड़का यहाँ रहता था, कुछ काम धंधा न हो तो तीस साल तक वो मर जाता था। अभी छारानगर में करीब 35 प्रतिशत विधवा हैं। तो वो विधवा क्या करेंगी? बाहर कहीं नौकरी पर जा नहीं सकतीं तो या तो शराब निकालेगी या फिर यहीं आजू-बाजू कहीं सिटी में जाएगी या तो आजू-बाजू के गाँव में जाएगी और चोरी करेगी। अपने बच्चों के पालन के लिए। तो चोरी और दारू के लिए यही कारण है।

प्रां० श्या०—तो अभी यहाँ कितना फायदा उठा रही है पुलिस। भट्ठी पकड़ते हैं। अभी 200 रु. ले गए, दारू भी ले गए और औरत भी बुला रहे हैं केस भरने के लिए। अब करें क्या? चोरी तो अब भी चलती है, पर नौकरी जो मिल जाए, तो कोई नौकरी छोड़ के चोरी नहीं करेगा। सुखी हो जावे। चोरी में मार पड़ती है। तो अभी भी जो कोई ऐसा हो जाए तो भी अच्छा हो जाए। हम छारों के बच्चों को देखो। जवान-जवान फिर रहे हैं। कोई नौकरी नहीं, कोई धंधा नहीं, क्या करेंगे मां-बाप, कैसे खिलाएंगे?

दक्षिण बजरंगे—ये सबसे बड़ी समस्या है। ऐसा लग रहा है कि इतिहास घूम रहा है। जब इनके पास शिक्षा नहीं थी, इनके पास रास्ता नहीं था। इसलिए इन लोगों ने चोरी किया, दारू बनाया इत्यादि-इत्यादि—खाने के लिए, पेट के लिए। अब शिक्षा है, लेकिन अभी जो विषमता चल रही है, समाज के अन्दर और छारों के प्रति, यह बहुत बड़ी समस्या है। बेरोजगारी की वजह से 12-15 साल के लड़के चोरियाँ करने के लिए जाते हैं। एक बात है—आदमी भूखा हो सकता है, भूखा सो नहीं सकता। एक जवान बच्चा नहीं चाहेगा कि उसके माँ-बाप भूखे सोएँ या उसके भाई-बहन भूखे सोएँ। अपने घर के गुजारे के लिए वो कुछ न कुछ तो करना चाहेगा। अगर यहाँ दारू बनाते हैं तो भी समस्या है। जितना कमाते नहीं उससे ज्यादा देना पड़ता है। मानो सौ रुपया में अस्सी रुपया देना पड़ता है।

प्रां० श्या०—20 रुपये में दस आदमी का पूरा होगा क्या? मेरी छोकरी ने तीन दिन खाना अभी भी नहीं पकाया। दारू नहीं बिकी इसलिए। अपने पोते की बात बोलती हूँ, खाना नहीं पकता हमारे छोकरियों के घर में, बताओ। कोई देखेगा, कोई नहीं देखेगा। पैसे वाला है, वो हँसी उड़ाएगा न। न पैसे वाला तो मर रहा है। अब मेरे को, बुड्ढी को कोई पगार नहीं बाँधता कि भाई इसका आदमी मर गया है, विधवा है, इसका पगार तो बांध दो।

☆ ☆ ☆

(छारानगर में घूमते हुए सेटलमेंट में रही एक अन्य महिला अमरती से मुलाकात)

अ० पा०—आपका नाम क्या है?

अमरती—अमरती

अ० पा०—आप कहाँ से आई?

अमरती—हम पाली राजस्थान से आए।

अ० पा०—क्या वहाँ भी घेरा था, तार था?

अमरती—नहीं, वहाँ तार नहीं थी। उधर तो खाली मैदान था। मैदान के अन्दर खेती-बाड़ी करती थी। फिर वहाँ मेहनत-मजदूरी कम हुई तो यहाँ आ गए।

अ० पा०—अभी आपके पति हैं?

अमरती—हाँ, हैं।

अ० पा०—वो क्या काम करते हैं?

अमरती—भीख माँगते हैं।

अ० पा०—क्यों?

अमरती—क्या करें काम नहीं है कोई। चार छोकरे थे। दो मर गए। दारू पी-पी के। बाकी दो कोई मदद नहीं करते।

अ० पा०—तो आप क्या ये दुकान चलाती हैं?

अमरती—ये चला रही हूँ। *(अल्यूमिनियम के सामने रखे हुए दो छोटे बरतनों की ओर इशारा करते हुए।)* चावल-बटाटा बेचती हूँ। इससे पाँच-दस रुपये मिल जाते हैं दिन भर में।

अ० पा०—और भीख माँगने से कितना मिलता है?

अमरती—उसको मिलता है दस-पन्द्रह रुपया। ले के आ जाता है।

अ० पा०—उससे काम चल जाता है?

अमरती—हाँ चल जाता है।

अ० पा०—आपके दोनों लड़के क्या करते हैं?

अमरती—दारू पी के पड़े रहते हैं बस।

अ० पा०—और उनकी औरतें क्या करती हैं?

अमरती—दारू निकालती होंगी।

☆ ☆ ☆

अ० पा०—क्या आप गाँधी जी को मिले थे?
साँ० भा०—हाँ गाँधी जी को आश्रम में मिला था। उसकी खाटला है न-चारपाई, उसका चारपाई उठा के लाया था एक आदमी हमारा।
अ० पा०—क्या गाँधी जी की चारपाई चुराई थी?
साँ० भा०—चारपाई चुराई थी।
अ० पा०—वो कौन था?
साँ० भा०—वो आदमी हमारा जात का था। छारा ही था वो भी। उसको वापस करके चारपाई दिलाई।

(आगे बढ़ते हुए हमारी मुलाकात बस्ती के 80 वर्षीय सांवला भाई से होती है।)

सांवला भाई—मैं भी पहले सेटलमेंट में रहता था। सेटलमेंट में चार दफे हाजिरी देते थे। हाजिरी नहीं होती थी तो हमको तीन दिन का सजा देते थे और यदि हम फिर भी नहीं जाते तो हमारी सजा दूना कर देते। हमारा मजिस्ट्रेट अलग था। वहाँ भद्रकाली है न, वो हमें महीने दो महीने की सजा दे देता था, जेल में भेज देता था। वहाँ हमारे को जेल में मजूरी करना था। फिर अर्जुन लाला था न वह हमारी खबर लेता था। *(अर्जुनलाला शायद उनके कहे अनुसार गाँधी जी से प्रेरित होकर आए हुए व्यक्ति थे।)* पन्द्रह दिन-महीने में बस-मोटर लेकर आता था तो वो हमारी खबर लेता था। अभी तो कोई ध्यान नहीं देता।

अ० पा०—क्या आप गाँधी जी को मिले थे?

साँ० भा०—हाँ गाँधी जी को आश्रम में मिला था। उसकी खाटला है न-चारपाई, उसका चारपाई उठा के लाया था एक आदमी हमारा।

अ० पा०—क्या गाँधी जी की चारपाई चुराई थी?

साँ० भा०—चारपाई चुराई थी।

अ० पा०—वो कौन था?

साँ० भा०—वो आदमी हमारा जात का था। छारा ही था वो भी। उसको वापस करके चारपाई दिलाई।

अ० पा०—वापस कर दिया?

साँ० भा०—हाँ वापस दिला के फिर हमको अच्छा लगा। हमारे पास कभी-कभी भाषण करने आता था। हम जंगली थे। पहले पढ़ते नहीं थे। कुछ नहीं थे। तब हम क्या करें? हमारा एक छारा था। वो पुलिस वाचमैन में था। सबकी खबर लेता था। उसको हमने बताया कि ये आदमी ने चुराई है, तुम जाके देके आओ। तो उसने वापस करी।

साँवला भाई

अ० पा०—तो गाँधी जी ने कुछ कहा?

साँ० भा०—कहा कि काहे को हमारी चारपाई चुराई। तो हमने कहा, हमारे पास खाने को नहीं था, पैसा नहीं था।

अ० पा०—तो फिर गाँधी जी ने क्या कहा?

साँ० भा०—कुछ किया नहीं। थोड़ा झड़पा दिया। बोले अब मत चोरी करना। तो हमने बोला—अच्छा हम नहीं करेंगे।

अ० पा०—सेटलमेंट में कैसा था?

साँ० भा०—सेटलमेंट में हम 20 साल रहे। हम मजूरी करते थे और चार-आठ आने पगार मिलता था।

अ० पा०—आप मजूरी ढूढ़ते कहाँ थे?

साँ० भा०—हमें पुलिस ले जाती थी। दस-पन्द्रह आदमी इकट्ठे करते और दो पुलिस वाले हमको लेके जाते थे। 1952-53 में हमको आजाद करे। फिर हम लोग मेहनत-मजूरी करें दारू काढें, क्या करें। मेरा छोकरा, मेरा पोता बी० कॉम पढ़ा है, तो कितनी जगह भी घूम आया पर कोई नौकरी नहीं देता, क्या करें। तीन छोकरे मेरे मर गए। एक छोकरा रहा। तीनों छोकरों के सब परिवार मेरे माथे हैं। तीनों की औरतें हैं, उनके बच्चे मेरे पास हैं।

अ० पा०—बच्चे बिना दवा के मरे?

साँ० भा०—दारू पी-पी के मर गए।

☆ ☆ ☆

हमारी बात समाप्त हो गयी। कमोबेश यही कहानी छारानगर के हर घर की है।

[हम मातृतुल्या महाश्वेता देवी, डॉ जी० एन० देवी तथा अहमदाबाद के एडवोकेट श्री रतन कोडेकर के प्रति आभार प्रकट करते हैं जिनके प्रयत्नों से यह यात्रा संभव हो सकी। —सम्पादक]

बूधन—एक नाटक

□ दक्षिण बजरंगे

पात्र

बूधन	पात्र-1
श्यामली	पात्र-2
इन्स्पेक्टर अशोक रॉय+ जज	पात्र-3
सहायक सुप्रीटेन्डेन्ट+हवलदार 1	पात्र-4
पानवाला+हवलदार 2	पात्र-5
संत्री+हवलदार 3	पात्र-6
श्रीधर	पात्र-7

☆ ☆ ☆ ☆ ☆

(नाटक में कुल सात पात्र हैं। ये सभी पात्र अपने-अपने चरित्र के साथ सूत्रधार की भूमिका भी करेंगे। नाटक में संगीत के लिए ढोल का उपयोग कर सकते हैं। नाटक का ज्यादातर भाग करुणामय है। इसलिए नाटक करते वक्त करुणा का भाव उत्पन्न हो, यही इस नाटक की सार्थकता है)

दृश्य-1

पात्र-7 (सूत्रधार) : नमस्कार! नाटक से पहले आइए, हम अपने इतिहास को टटोलें। हमारा भारत देश। देश की कुल आबादी एक अरब जिनमें डी एन टी की जनसंख्या छह करोड़। फिर भी न जाने क्यों सरकार के लिए अलक्षित हम डी एन टी। हम आदिवासी। हमें जन्म से अपराधी माना जाता है। सदियों से पृथ्वी पर हो रहे परिवर्तनों के गवाह। कुदरत के बीच नैसर्गिक वातावरण में रहने वाले, कुदरत की कोख से पैदा हुए, पले, बड़े हुए और मर गए। जंगलों के लिए दावा करना पड़ता है। सदियों से डी एन टी कुत्ते की मौत मरते आए हैं। कभी डी एन टी सवर्णों के गाँव के आगे से गुजरते थे तो उनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाते थे।

(स्टेज के पृष्ठभाग के एक कोने में कुछ आदिवासी (पात्र 1, 2, 6, 7) लकड़ियाँ लेकर निकल रहे हैं। वहीं जंगल में छुपे गैर आदिवासी लोग (पात्र 3, 4, 5) उन पर हमला कर देते हैं। चारों ओर इन असहाय अदिवासियों की ''बचाओ बचाओ आह...आह...'' की दर्दनाक चीखें गूँज उठती हैं। लोग इनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर देते हैं। सभी पात्र धराशायी हो जाते हैं।)

पात्र 7 (सूत्रधार) : ऐसे ही सन् 1979 में कोछा जमात के लोगों को पानी में डुबोकर तड़पा-तड़पा कर मारा गया...

(इस संवाद के दौरान पात्र (1, 2, 6, 7) दूसरा दृश्य बनाते हैं, जिसमें आदिवासियों को बाँध रखे हैं और पात्र (3, 4, 5) कह रहे हैं)

पात्र 3 : इनका सिर पानी में डुबो दो।

पात्र 4 : जब तक साँस न रुके सिर को पानी में ही रहने दो।

पात्र 5 : तड़पा-तड़पा कर मारो सालों को।

(बँधे हुए आदिवासियों (पात्र 1, 2, 4, 6) का सिर पानी में डुबो दिया जाता है। वे तड़प-तपड़ कर मर जाते हैं। सभी पात्र

उसी स्थिति में हो जाते हैं)

पात्र 7 (सूत्रधार) : और इस तरह न जाने कितने ही डी एन टी बेमौत मारे जा रहे हैं। न जाने कितने अत्याचार किए जा रहे हैं। देश के सही हकदारों के हक छीने जा रहे हैं। पेश है ऐसे ही सबर जमात के एक युवक बूधन पर हुए पुलिस अत्याचार की सत्यगाथा! क्रांति।

(सभी पात्र एक-एक करके क्रांति का नारा लगाएंगे और एक लाइन में खड़े हो जाएंगे।)

सभी : एक क्रांति आई थी, एक क्रांति आएगी!

वो क्रांति देश की आज़ादी की थी, ये क्रांति डी एन टी की है!!

(सभी पात्र अपना-अपना संवाद बोलकर सड़क के किनारे स्थित एक पान की दुकान का दृश्य बनाएंगे)

पात्र 2 (सूत्रधार) : आप जो देखने जा रहे हैं वह अन्त नहीं आरम्भ है।

पात्र 1(सूत्रधार) : पश्चिम बंगाल का एक छोटा सा गाँव अकराबाघ। वहाँ की सबर जमात, जो कानून की नजरों में चोरों की जमात मानी जाती है।

पात्र 6 (सूत्रधार) : बूधन अपने छोटे से गाँव में अपनी प्यारी-सी बीवी श्यामली और मासूम बच्चे के साथ शांति का जीवन बसर कर रहा था।

पात्र 3 (सूत्रधार) : लेकिन 10 फरवरी 1998 को कानून को अपने हाथों में लेकर चलने वाला पुलिस ऑफिसर अशोक रॉय की काली नजर बूधन पर पड़ी और उसने बूधन की जिंदगी को तहस-नहस कर दिया।

पात्र 7 (सूत्रधार) : एक ऐसा भयानक अत्याचार जो आपको सोचने पर मजबूर कर देगा कि क्या हम सही मायने में आजाद हैं ?

पात्र 4 (सूत्रधार) : आजादी के 52 साल बाद भी अंग्रेजों का डी एन टी को दिया हुआ नाम 'जन्मजात अपराधी' आज भी लगभग चल रहा है।

पात्र 5 (सूत्रधार) : बूधन सबर पर हुए पुलिस अत्याचार का नाटक आप आगे देखिए।

दृश्य-2

(सड़क के किनारे स्थित पान की दुकान का दृश्य बनाया जाता है। बूधन अपनी साइकिल हाथों में लिए अपनी बीवी श्यामली के साथ चला आ रहा है। वहीं उसे पान वाला आवाज देता है।)

पात्र 5 (पानवाला): *(बूधन को)* अरे...ओ...तनिक पान-वान चबाई ल्यो।

(बूधन पानवाले चाचा की ओर देखता है। अपनी बीवी से पूछता है।)

पात्र 1 (बूधन) : अरी...ओ...श्यामली...तू पान खाएगी क्या ?

(श्यामली घुंघट में से ही 'हाँ' कहती है। बूधन पानवाले की ओर जाते हुए)

पात्र 5 (पानवाला) : हाँ...हाँ... अभी बनावत हैं। *(कुछ देर पान पर चूना-कत्था लागने के बाद)*

अरे...बुधनवा...तू...कहाँ जात रहे हो ?

पात्र 1 (बूधन) : अरे क्या बताएँ चाचा...वो...वो...मामा ससुर हैं न, उनकी जरा तबीयत ठीक नहीं है वहीं जा रहे हैं।

पात्र 5 (पानवाला) : अच्छा...अच्छा हमरी याद देना उन्हें...ई लो तोहार दुई पनवा।

पात्र 1 (बूधन) : और ये लो तुम्हारा पैसा...

(बूधन जैसे ही पैसे देने के लिए हाथ बढ़ाता है वैसे ही इन्स. अशोक रॉय उसका हाथ पकड़ लेता है। इन्स. अशोक रॉय अपने थाने में लम्बित केस थोपने के लिए किसी सबर की तलाश में घूम रहा था।)

पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(बूधन का हाथ पकड़ते हुए)* ऐ...तेरा नाम क्या है ?

पात्र 1 (बूधन) : बूधन सबर साब। *(घबराते हुए)*

पात्र 3 (अशोक रॉय) : हूँ...सबर...चल पुलिस थाने चल।

पात्र 1 (बूधन) : लेकिन साब...मेरा गुनाह क्या है ?
पात्र 3 (अशोक रॉय) : हरामजादे, तेरा सबसे पहला गुनाह तो ये है कि तूने पुलिस से सवाल किया...
(अशोक रॉय बूधन को हाथों से खींच कर नीचे गिरा देता है।)
पात्र 1 (बूधन) : साब...क्या कर रहे हो साब...मैं तो...
पात्र 3 (अशोक रॉय) : सीधी तरह चल वरना बीच बाजार नंगा करके ले जाऊंगा। *(बूधन को अपने पैर से मारता है)* चल। चल...
पात्र 1 (बूधन) : *(गिड़गिड़ाते हुए)*
(बूधन की आवाज सुन श्यामली बूधन को छुड़ाने दौड़ते हुए आती है।)
पात्र 2 (श्यामली) : बूधन क्या हुआ बूधन...बूधन...साब...क्यूं मार रहे हो साब...मेरे बूधन ने क्या किया है साब...
पात्र 3 (अशोक रॉय) : तू...कौन है तू ?
पात्र 2 (श्यामली) : साब...मैं...मैं...श्यामली। इसकी औरत।
पात्र 3 (अशोक रॉय) : अच्छा...इसकी औरत। साली चोर की औरत चोट्टी। चल भाग यहाँ से *(कहकर श्यामली को धक्का मारकर नीचे गिरा देता है।) (हवलदार से)* ले चलो साले को बीच बाजार घसीटते हुए।
पात्र 2 (श्यामली) : *(चिल्लाते हुए)* बूधन...
(सभी पात्र कुछ देर के लिए स्तब्ध हो जाते हैं। फिर अपने-अपने संवाद बोलकर "बड़ाबाजार पुलिस थाना" का दृश्य बनाएंगे।)
पात्र 2 (सूत्रधार) : श्यामली एक भोली-भाली और अबोध औरत है।
पात्र 1 (सूत्रधार) : बूधन को गिरफ्तार करने से पहले बताया भी नहीं गया कि उसका गुनाह क्या है।
पात्र 3 (सूत्रधार) : कानून के मुताबिक मुजरिम को गिरफ्तार करने से पहले ये बताया जाता है कि उसका गुनाह क्या है।
पात्र 6 (सूत्रधार) : बूधन का एक गुनाह तो यह था कि वो चोरों की जमात मानी जाने वाली सबर जमात का था।
पात्र 7 (सूत्रधार) : लेकिन अशोक रॉय, कानून को तो हमेशा अपने बंदूक की नोंक पर रखता था।
पात्र 5 (सूत्रधार) : सबरों को मारना उसके लिए दिल लुभावन खेल था।
पात्र 4 (सूत्रधार) : वाह ! क्या बेरहम दिल इन्सान है।
(बड़ाबजार ? पुलिस थाने का दृश्य बन जाने के बाद)

दृश्य 3

पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(हवलदार से)* ले चलो इसे...
(बाहर खड़ा हुआ हवलदार)
पात्र 5 (हवलदार) : सलाम साब...
पात्र 3 (अशोक रॉय) : सलाम...
(हवलदार बूधन को लॉक-अप में ले जाता है। अशोक रॉय अपना रिवाल्वर केस टेबल पर रख कर और दूसरे हवलदार को कुछ हिदायत देकर लॉक-अप में जाता है।)
पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(बूधन को)* बोल...चोरी का माल कहाँ रखा है ?
पात्र 1 : *(घबराते हुए)* साब, मैंने कोई चोरी नहीं की है साब।
पात्र 3 (अशोक रॉय) : हरामजादे, ये मैं भी जानता हूँ कि चोरी नहीं की है, लेकिन पिछले दिनों मेरे इलाके में सत्रह चोरियाँ हुई हैं। कितनी ? सत्रह चोरियाँ। उन सबकी रिपोर्ट तो बनानी पड़ेगी न।
पात्र 1 (बूधन) : लेकिन साब...मैं तो हाथों से खिलौने बनाकर समिति में...*(बूधन की बात बीच में ही काटते हुए)*
पात्र 3 (अशोक रॉय) : तू चाहे जो भी करता हो, चोरी तो तुझे कबूल करनी ही पड़ेगी। *(डंडा दिखाते हुए)* आखिर कानून

ने हमें ये डंडा किस लिए दिया है!

चल, कबूल कर चोरी!

(अशोक रॉय डंडे से बूधन के पैरों पर मारता है। मारे दर्द के बूधन के मुँह से चीख निकल जाती है। अशोक रॉय वहशी जानवर की तरह उसे मारने लगता है। वहीं पुलिस थाने के बाहर श्यामली बूधन को ढूँढ़ते हुए आ जाती।)

पात्र 2 (श्यामली) : बूधन...बूधन (पुलिस थाने के अंदर जाना चाहती है।)

पात्र 5 (हवलदार) : *(श्यामली को रोकते हुए)* ए...लड़की, कहाँ जा रही है?

पात्र 2 (श्यामली) : *(हवलदार के सामने गिड़गिड़ाते हुए)* साब...साब...मुझे मेरे पति से मिलना है साब।

पात्र 5 (हवलदार) : तेरा पति कौन?

पात्र 2 (श्यामली) : वो...बड़े साब...अभी-अभी आये न!

पात्र 5 (हवलदार) : अच्छा वो...वो तो साला सबर है। चोर है।

पात्र 2 (श्यामली) : नहीं साब...ऐसा मत बोलो साब...वो चोर नहीं है साब...उसने कोई चोरी नहीं की...हम तो खिलौने बनाकर समिति में बेचते हैं...उसने कोई चोरी नहीं की।

पात्र 5 (हवलदार) : उसने चोरी की है कि नहीं ये पता लगाना पुलिस का काम है। समझी।

पात्र 2 (श्यामली) : लेकिन साब वो तो मेरा सुहाग है, मेरा पति है। मुझे तो उससे मिलने दो।

पात्र 5 (हवलदार) : तुझे अपने पति से मिलना है तो यहाँ नहीं कोर्ट में मिलना। चल...चल...निकल यहाँ से...

(हवलदार श्यामली को धक्का मारता है। लेकिन श्यामली बूधन के लिए जोर-जोर से चिल्लाती है। आवाज लॉक-अप में बूधन को मार रहे इंस्पेक्टर अशोक रॉय के कानों तक पहुँचती है।)

पात्र 3 (अशोक रॉय) : कौन...कौन चिल्ला रहा है ये?

(अशोक रॉय बाहर आता है। श्यामली अशोक रॉय को देख उसके पैरों में गिर पड़ती है)

पात्र 2 (श्यामली) : साब...साब...मेरे पति को छोड़ दो साब...उसने कुछ नहीं किया।

पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(श्यामली को देख)* तू...तू यहाँ भी आ पहुँची।

पात्र 2 (श्यामली) : *(गिड़गिड़ाते हुए)* साब...मैं आपके पैर पड़ती हूँ। आपके हाथ जोड़ती हूँ। मेरे पति को छोड़ दो।

पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(पैरों में पड़ी श्यामली को अपने पैरों से धक्का मारते हुए)* सीधी तरह से चली जा वरना तुझ पर भी डंडे पड़ेंगे।

पात्र 2 (श्यामली) : *(थोड़ा गुस्सा होते हुए)* मार डालो मुझे भी मार डालो...लेकिन मेरे बूधन को छोड़ दो साब। *(अशोक रॉय के सामने अपना पल्लू फैलाते हुए)* मैं आपसे अपने सुहाग की भीख माँगती हूँ साब...

पात्र 3 (अशोक रॉय) : अरे...ये पुलिस स्टेशन है। कोर्ट, मंदिर नहीं जहाँ भीख दी जाए। चल हट।

(अशोक रॉय अंदर चला जाता है। श्यामली पीछे गिड़गिड़ाती रहती है।)

पात्र 2 (श्यामली) : साब...सा...ब...छोड़ दो साब...मेरे बूधन को छोड़ दो....

(हवलदार अंदर जाने से रोकता है।)

(नेपथ्य से आवाज गूँजती है—)

सबरों के खून की, पुलिस बनी है प्यासी!
अरे कौन समझाए इनको, ये भी हैं भारतवासी!!

पात्र 5 : दिनांक 11 फरवरी 1998

दृश्य -4

(बड़ाबाजार पुलिस थाना। 11 फरवरी की सुबह अशोक रॉय पुलिस थाने आता है)

पात्र 5 (हवलदार) : *(गेट पर खड़ा हवलदार)* सलाम साब

पात्र 3 (अशोक रॉय) : सलाम *(पुलिस थाने में)*

पात्र 4 (हवलदार) : सलाम साब
पात्र 3 (अशोक रॉय) : सलाम! *(हवलदार से)* कुछ कबल किया?
पात्र 4 (हवलदार) : नहीं साब।
पात्र 3 (अशोक रॉय) : हूँ...*(कुछ सोचने के बाद हवलदार से)* तुम चलो मेरे साथ...
पात्र 4 (हवलदार) : साब...वो...बूधन सबर की कल की गिरफ्तारी की तारीख रजिस्टर में डाल दूँ?
पात्र 3 (अशोक रॉय) : कब समझेगा तू? इन्सपेक्टर बनना है कि नहीं? अपना काम कल को आज करना है। ये सरकारी कागज हैं किस लिए? बूधन सबर की गिरफ्तारी की तारीख आज की होनी चाहिए। और ध्यान रहे नम्बर रजिस्टर में नहीं होना चाहिए। समझे!
(हवलदार हामी भरता है। अशोक रॉय हवलदार को लेकर लॉक-अप में जाता है। जहाँ बूधन पानी से बाहर लायी हुई मछली की तरह तड़प रहा है।)
पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(हवलदार से)* उठाओ इसे।
(हवलदार बूधन को लात मारकर उठाता है। बूधन नींद में से जगते ही जैसे तड़प उठता है।)
पात्र 1 (बूधन) : पानी...पानी...पानी...मुझे...कोई...पानी दो...
(गला सूख जाने की वजह से बूधन के गले से आवाज भी बराबर नहीं निकल पा रही है) मेरा...मेरा गला सूखा जा रहा है...मुझे कोई पानी दो...पानी...पानी...
(बूधन को तड़पता देख अशोक रॉय के चेहरे पर क्रूरता आ जाती है।)
पात्र 3 (अशोक रॉय) : शिवलाल...ला...वो शराब की बोतल और उड़ेल दे इस हरामजादे के मुँह में...
(शराब का नाम सुनते ही बूधन बुरी तरह घबरा जाता है।)
पात्र 1 (बूधन) : साब-साब...मैं शराब नहीं पीता। मैं शराब नहीं पीता...मुझ गरीब पर रहम करो साब...
पात्र 3 (अशोक रॉय) : सबर! और शराब नहीं पीता!
(इस बीच शिवलाल दारू की बोतल लाता है और अशोक रॉय को देता है।)
पात्र 3 (अशोक रॉय) : चल...मुँह खोल...*(हवलदार को)* तुम इसकी नाक दबाओ...
पात्र 1 (बूधन) : नहीं...साब...नहीं...*(सारी शराब बूधन के मुँह में जबरदस्ती उड़ेल दी जाती है। शराब पीने की आदत न होने की वजह से बूधन बुरी तरह खाँस उठता है।)*
पात्र 3 (अशोक रॉय) : अब तू तो क्या तेरे फरिस्तों को भी कबूल करना पड़ेगा कि चोरी तूने की है।
(और बूधन को फिर लातों से, घूसों से और डंडों से वहशी जानवर की तरह मारा जाता है। बूधन दर्द के मारे कराह उठता है। उसकी दर्दनाक चीखें बाहर बैठी भूखी, प्यासी श्यामली के कानों में पड़ती हं। वह बुरी तरह तड़प उठती है। फिर से दौड़कर पुलिस थाने के दरवाजे पर जाती है। वहाँ उसे हवलदार रोकता है।)
पात्र 5 (हवलदार) : ए...लड़की...तू...अभी तक नहीं गई?
(आँखें दिखाते हुए)
पात्र 2 (श्यामली) : *(गुस्से में)* नहीं जाऊँगी। अपने बूधन से मिले बिना नहीं जाऊँगी।
पात्र 5 (हवलदार) : सीधी तरह जाती है कि नहीं? (डंडा उठाता है)
पात्र 2 (श्यामली) : *(निडरता से उसका सामना करते हुए)* मार डालो। मुझे भी मार डालो। जब मेरा बूधन ही नहीं होगा तो मैं जीकर क्या करूँगी।
पात्र 5 (हवलदार) : अरे...मरने का इतना ही शौक है तो जा के गाँव के कुएँ में मर। चल निकल यहाँ से।
(श्यामली को हवलदार धक्का मारता है। श्यामली आते-जाते राह चलते लोगों से अपने सुहाग को बचाने के लिए विनती करती है।)
पात्र 2 (श्यामली) : *(रोते हुए)* अरे...कोई तो मेरे पति को बाचाओ...ये लोग उन्हें मार डालेंगे! भाई साब...भाई साब आप

तो मेरी मदद करो। उन्होंने कुछ नहीं किया। बहन जी...बहन जी आप तो मेरी मदद करो। वो लोग मेरे बूधन को मार डालेंगे...*(पुलिस थाने से बूधन की एक दर्दनाक चीख)* देखो...देखो...कितनी बेदर्दी से मार रहे हैं मेरे बूधन को। भाई...भाई आप तो मेरी मदद करो...हम तो...हम तो सिर्फ पान खा रहे थे...क्या हमारे लिए पान खाना भी...? बूधन...बूधन...
(नेपथ्य से आवाज़ गूंजती है)

इस देश के कानून का, कैसा अत्याचार है!
जुर्म करे कोई मगर, निर्दोष पे ही मार है!!

(पुलिस थाने का दृश्य कुछ पात्र अपने-अपने संवाद बोलकर दृश्य तथा चरित्र बदलेंगे।)

पात्र 5 (सूत्रधार) : 10 फरवरी से 12 फरवरी तक बूधन को लॉक-अप में भूखा-प्यासा रखा गया।

पात्र 4 (सूत्रधार) : बिना रिमान्ड ऑर्डर बूधन पर थर्ड डिग्री आजमाया गया। ये कैसा कानून?

पात्र 7 (सूत्रधार) : 13 फरवरी को साबर जमात के एक युवक श्रीधर सबर को बड़ाबाजार पुलिस थाने में लाया जाता है।

दृश्य-5

(बड़ाबाजार पुलिस थाने के आमने-सामने दो लॉक-अप का दृश्य है। एक हवलदार, श्रीधर को पकड़कर लॉक-अप में अन्दर करते हुए।)

पात्र 5 (हवलदार) : *(श्रीधर का गिरेवान पकड़ते हुए)* चल...अंदर चल...साला सबर चोरी करता है। चल...अंदर चल...

पात्र 7 (श्रीधर) : साब...छोड़ दो न... साब...कुछ खर्चा पानी...

पात्र 5 (हवलदार) : मुँह बंद कर अपना...

(लॉक-अप का दरवाजा बंद करता है। वहीं दूसरे लॉक-अप में बूधन कैद है। बूधन बेहोशी की हालत में फर्श पर पड़ा है। और बार बार अपनी जान बक्श देने के लिए विनती कर रहा है।)

पात्र 1 (बूधन) : *(लड़खड़ाती हुई आवाज में)* सा...ब...मुझे छोड़...दो... साब...मैं...मर...जा...उं...गा, साब...

पात्र 3 (अशोक रॉय) : ये सबर की जान बड़ी सख्त होती है। लगता है ये इतनी आसानी से नहीं मानेगा। इस पर थर्ड डिग्री का इस्तेमाल करना ही पड़ेगा *(हवलदार को)* इसे इलेक्ट्रिक शॉट देने की तैयारी करो...

पात्र 6 (हवलदार) : लेकिन...साब...इस तरह तो इसकी मौत भी हो सकती है।

पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(हवलदार को आँख दिखाते हुए)* तुम्हें जितना कहा गया है उतना ही काम करो। यह मेरा हुक्म है!

(हवलदार घबराकर अशोक रॉय जैसा कहता है वैसा करने लगता है। वह बूधन को घुटनों के बल बिठाता है। उसके हाथ पीछे से बाँध देता है। और मशीन चालू कर बूधन के सिर में इलेक्ट्रिक बेल्ट बाँधता है। अशोक रॉय अपने हाथ से बूधन को इलेक्ट्रिक शॉक देता है। इलेक्ट्रिक शॉक लगते ही बूधन का पूरा शरीर काँप उठता है। वह मछली की तरह तड़पने लगता है। उसकी आँखें ऊपर चढ़ जाती हैं। उसके मुँह से लार टपकने लगती है। बूधन को दो-तीन बार इलेक्ट्रिक शॉक से झटके दिये जाते हैं और वह एक जिंदा लाश का ढेर बनकर गिर पड़ता है। यह दृश्य दूसरे लॉक-अप में बंद श्रीधर देख रहा है। बूधन श्रीधर का दोस्त है। वह छुपकर यह सब नजारा देखता है। उसकी आँखों में भी आँसू आ जाते हैं। वह चाहकर भी बूधन को नहीं बचा सकता।)

(सभी पात्र अपने-अपने संवाद बोलकर पुरुलिया जेल में चल रहे हाजिरी का दृश्य बनाएँगे। जिसमें कुछ कैदी नीचे बैठे हैं और सहायक सुपरिटेन्डेंट हाज़िरी लगा रहा है।)

पात्र 5 (सूत्रधार) : कोर्ट का हुकम, बूधन को 13 फरवरी से 16 फरवरी तक रिमान्ड पर लिया जाए।

पात्र 7 (सूत्रधार) : अंधे-बहरे कानून को ये नहीं दीखाई देता कि बूधन का रिमान्ड तो पहले से ही लिया गया है। एस.पी, डी. एस. पी और अशोक रॉय बूधन को हथकड़ियाँ पहनाकर तलाशी के लिए उसके घर ले गए, जहाँ उन्हें सिवाय गरीबी के कुछ भी नहीं मिला।

पात्र 3 (सूत्रधार) : 13 फरवरी को कोर्ट श्रीधर सबर की जमानत रद्द करती है और उसे पुरुलिया जेल में लाया जाता है।
पात्र (सूत्रधार) : तीन दिन के रिमान्ड के बाद कोर्ट बूधन को भी सजा करती है और उसे भी पुरुलिया जेल ले जाया जाता है।
पात्र 6 (सूत्रधार) : सूर्यास्त के पश्चात बूधन को पुरुलिया जेल ले जाया जाता है, जो कानून के खिलाफ है।

दृश्य-6

(सभी पात्र अपने-अपने संवाद बोलकर पुरुलिया जेल का दृश्य बनाते हैं, जहाँ सहायक सुप्रिटेन्डेन्ट सभी कैदियों की हाजिरी लगा रहा है। श्रीधर भी कैदियों की लाइन में बैठा है।)
पात्र 4 (सुप्रि) : श्रीधर...
पात्र 7 (श्रीधर) : हाँ, जी साब।
(सुप्रि. अपने हाजिरी रजिस्टर में टिक करता है।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : कॉजी
पात्र 5 कॉजी) : जी...साब...
(सुप्रि. अपने रजिस्टर में टिक करता है। इसी दौरान एक हवलदार बूधन का हाथ पकड़कर, संभाल-संभाल कर जहाँ हाजिरी चल रही है वहाँ लाता है। बुरी तरह मारने की वजह से बूधन ठीक तरह से चल भी नहीं पा रहा है। उसे चलने के लिए हवलदार के सहारे की जरूरत है।)
पात्र 6 (हवलदार) : *(सुप्रि. को)* साब ये सबर है। कल शाम बड़ाबाजार पुलिस थाने से लाया गया है।
(सुप्रि. के 'सबर' सुनते ही उसका चहेरा नफरत से भर जाता है।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : हूँ...तलाशी लो इसकी।
(हवलदार तलाशी लेता है लेकिन कुछ भी नहीं मिलता।)
पात्र 6 (हवलदार) : कुछ भी नहीं है साब...
पात्र 4 (सुप्रि.) : ठीक है। इसे वहीं नीचे बैठा दो और अपना काम करो।
पात्र 6 (हवलदार) : लेकिन साब...लगता है इसे बहुत मारा गया है। ठीक तरह चल भी नहीं पा रहा है और अभी तक इसका डॉक्टरी जाँच भी नहीं हुई है।
पात्र 4 (सुप्रि.) :(*बूधन की दशा से उदासीन होकर)* हाँ...हाँ...ठीक है, ठीक है। उसे बैठाओ और तुम जाओ।
(हवलदार बूधन को बैठाता है और चला जाता है। हवलदार के जाने के बाद)
पात्र 4 (सुप्रि.) : ए...तू... *(बूधन को)* नाम क्या है तेरा?
(बूधन की ओर से कोई प्रत्युत्तर नहीं। बूधन इस हालत में है ही नहीं कि वो जवाब दे सके। बूधन के न जवाब देने की वजह से सुप्रि. बौखला जाता है। वह बूधन के पास जाकर उसे बुरी तरह झंझोड़कर पूछता है।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : हरामजादे! सुनता नहीं। मैं तुझसे पूछ रहा हूं। नाम क्या है तेरा?
(बूधन अचानक जैसे सपने से बाहर आया हो, कुछ इस तरह का भाव प्रकट करता है। वह भयानक असमंजस में है। ये सब उसके साथ क्यों हो रहा है, वह नहीं जान पा रहा है। वह अपनी बाकी बची टूटी-फूटी आवाज में जवाब देता है।)
पात्र 1 (बूधन) : बू...ध...न...
पात्र 4 (सुप्रि.) : हूँ...बूधन...बूधन सबर...
(वह अपने हाजिरी रजिस्टर में लिखता है।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : बीवी का नाम... ?
(बूधन की ओर से फिर कोई प्रत्युत्तर नहीं। सुप्रि. ऊँची आवाज करते हुए)
पात्र 4 (सुप्रि.) : बी...वी...का...नाम... ?

(बूधन फिर से घबराकर)
पात्र 1 (बूधन) : श...या...मली...
पात्र 4 (सुप्रि.) : बच्चे... ?
पात्र 1 (बूधन) : बूधेव...
(सुप्रि. अपने रजिस्टर में कुछ लिखता है, फिर)
पात्र 4 (सुप्रि.) : हाँ...ठीक है...श्रीधर तुम टिफिन देकर एक नम्बर गेट पर खड़े रहो।
पात्र 7 (श्रीधर) : जी...साब...
(श्रीधर चला जाता है।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : काँजी तुम जाकर बाथरूम साफ करो।
पात्र 5 (काँजी) : जी साहेब...
(काँजी भी चला जाता है। श्रीधर और काँजी दोनों स्टेज के पिछले हिस्से में अपने काम में व्यस्त हो जाते हैं।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : *(बूधन को)* और...तू...बूधन 'सबर'! तुम जेल का सारा कचरा निकालेगा। समझा।
(यह ऑर्डर देकर सुप्रि. जेल का एक चक्कर मारने के लिए निकलता है। बूधन के हाथ-पैर पहले से ही तोड़े गये थे। वह बड़ी मुश्किल से उठा और झाड़ू हाथ में लिया। मगर पूरे बदन में भयंकर दर्द की वजह से वह एक डग भी आगे नहीं चल पाता है और वहीं बैठ जाता है। उसे बैठे देख संत्री उस पर चिल्लाता है।)
पात्र 6 (संत्री) : ए...क्या कर रहा है...काम क्यों नहीं करता...(इसी बीच सुप्रि. आ जाता है।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : क्या हो रहा है ये सब...क्या हो रहा है... ?
पात्र 6 (संत्री) : साब...ये काम नहीं कर रहा है।
पात्र 4 (सुप्रि.) : ये साले सबर...बड़े हराम खोर होते हैं। हराम की खाने की आदत पड़ चुकी है इन्हें... *(बूधन को गिरेबान से पकड़कर नीचे गिरा देता है)* मारो...साले को इतना मारो की जिंदगी भर हरामखोरी करना भूल जाये।
(संत्री और सुप्रि. बड़ी ही बेदर्दी से बूधन को मारते हैं। डंडे की मार से 'बूधन' की पसलियाँ टूट जाती हैं। उसके हलक से आवाज तक नहीं निकल पाती और संत्री और सुप्रि. दोनों जानवरों की तरह बूधन को पीटते हैं।... पीटने के बाद।)
पात्र 4 (सुप्रि.) : ले जाओ साले को अंधेरी कोठरी में! जब सूरज की रोशनी के लिए तड़पेगा तब पता चलेगा इस सबर को कि हराम का खाना क्या होता है।

दृश्य-7

(संत्री पीछे काम कर रहे दूसरे कैदियों को या अपने दूसरे साथियों को बुलाता है और अधमरे बूधन को उठाकर अंधेरी कोठरी में डाल देते हैं। बूधन थोड़ी देर तक इसी तरह बेसुध हालत में अंधेरी कोठरी में पड़ा रहता है। यहाँ श्रीधर जिसे कुछ देने का काम सौंपा गया है वह बूधन को दूध देने अंधेरी कोठरी में आता है। कोठरी में बहुत अंधेरा है। श्रीधर बूधन को ढूँढ़ने अंधेरी कोठरी में धीरे-धीरे बढ़ते हुए आवाज लगाता है।)
पात्र 7 (श्रीधर) : बूधन...बू...ध...न... कितना अँधेरा है यहाँ। ठीक से कुछ दिखाई भी नहीं देता। *(अपने माथे के ऊपर हाथ रखते हुए अपनी आँखों को छोटा करते हुए)* बू...ध...न...अरे...ओ बूधन...अरे आवाज तो लगा कहाँ है तू?
(श्रीधर अंधेरे में धीरे-धीरे आगे बढ़ता है। बूधन अधमरे जैसी हालत में एक कोने में बैठा हुआ है। श्रीधर का पैर बूधन को छूता है।...अचानक, जैसे बूधन गहरी, दर्दभरी नींद से जागा और उसके ताजा जख्म पर किसी ने उंगली डालकर कुरेद दिया हो, उस तरह से वह दर्द के मारे चिल्ला उठता है।)
पात्र 1 (बूधन) : *(श्रीधर के छूते ही)* मुझे...मत...मारो...मुझे मत मारो...मैंने कुछ नहीं किया साब...मैं बेकसूर हूँ साब...मुझे...मत मारो...मैंने कोई...चोरी नहीं की...मत मारो...आ...आ...
(बूधन को जैसे कोई मार रहा हो उस तरह वह तड़प उठता है। श्रीधर उसे शांत करते हुए)

पात्र 7 (श्रीधर) : बू...ध...न...बूधन...मैं...मैं...श्रीधर...तुम्हारा दोस्त श्रीधर...(बूधन को संभालते हुए) मुझे नहीं पहचाना...मुझे देखो...मैं...मैं...श्रीधर...

('श्रीधर'— नाम सुनते ही बूधन जरा शांत होता है। वह धीरे-धीरे अपने आप में आता है। वह अपनी आँखों को छोटा करके ध्यान से अंधेरे में श्रीधर के चेहरे को छूता है। वह श्रीधर है, ये यकीन होते ही बूधन जैसे छोटा बच्चा फुट फुटकर रोता है उस तरह श्रीधर के सामने रो पड़ता है।)

पात्र 1 (बूधन) : श्री...ध...र। श्रीधर, मुझे बचा ले श्रीधर...ये लोग मुझे बहुत मारते हैं श्रीधर...मैंने कु...छ...नहीं किया...मैं...मैं बेकसूर हूँ श्रीधर...मैंने कोई चोरी नहीं की...तुम तो जानते हो न, मैं तो खिलौने बनाता हूँ...श्रीधर मैं तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ। मुझे बचा लो...नहीं तो...नहीं तो ये लोग मुझे मार डालेंगे...श्री...ध...र...

(बूधन की, अपने दोस्त की यह हालत देखकर श्रीधर भावुक हो जाता है)

पात्र 7 (श्रीधर) : बूधन...तुम डरो मत बूधन...सब ठीक हो जायेगा।

(बूधन को सांत्वना देते हुए)

पात्र 1 (बूधन) : *(रोते हुए)* श्रीधर...मैं...बेकसूर हूँ...मैं बेकसूर हूँ...।

पात्र 7 (श्रीधर) : मैं जानता हूँ मेरे दोस्त...तुमने कुछ नहीं किया...लेकिन हम ठहरे सबर जमात के, हम गरीब आदिवासी क्या कर सकते हैं इन जालिमों का...तुम...तुम हिम्मत रखो मेरे दोस्त *(बूधन का चेहरा अपने हाथों में लेते हुए)* तुम्हें कुछ नहीं होगा...मैं तुम्हारा...तुम्हारा दोस्त...कुछ नहीं होगा तुम्हें *(नीचे रखा हुआ दूध का ग्लास अपने हाथ में लेते हुए)* ये...लो बूधन...दूध पी लो...

(बूधन दूध पीने के लिए मना करता है।)

पात्र 7 (श्रीधर) : अब...पी...भी लो बूधन...शायद कई दिनों से तुमने कुछ खाया भी नहीं होगा...*(ग्लास बूधन के मुँह में डालता है। बूधन दूध पी लेता है। दूध पीने के बाद जैसे ही श्रीधर जाने के लिए उठता है बूधन उसके पैर पकड़ लेता है।)*

पात्र 1 (बूधन) : मुझे छोड़कर...मत जाओ श्रीधर...मुझे यहाँ बहुत डर लगता है...ये...लोग मुझे मार डालेंगे श्रीधर...मुझे छोड़कर मत जाओ...

(श्रीधर न चाहते हुए अपने पैर बूधन से छुड़ाता है और ग्लास लेकर...)

पात्र 7 (श्रीधर) : तुम...चिंता न करना बूधन...तुम्हें कुछ नहीं होगा...कुछ नहीं होगा...

(अपने आप से बोलते हुए श्रीधर चला जाता है। श्रीधर के जाने के बाद बूधन को फिर से अंधेरी कोठरी का अकेलापन पागल बनाने लगता है। उसे बहुत ही घबराहट होती है...एकदम से बैचेन होने लगता है। उसे ऐसा लगता है जैसे उसके शरीर के साथ-साथ उसकी आत्मा, उसके मन पर भी घाव लग रहा हो। उसका ''मानस'' जैसे असंतुलित होकर उसे ही डराने लगता है। वह अपने आप पर, अपनी प्रतिक्रियाओं पर काबू नहीं कर पा रहा है। उसे ऐसा लगने लगता है जैसे उस अंधेरी कोठरी में उसके प्यारे बच्चे उसे आवाज लगा रहे हों...)

नेपथ्य से : बाबा...बाबा...मेले...लिये बाजाल से चकली ले आना...।

बाबा...बाबा...मे...ले...लिए मिठाई ले आना...।

(यह अंत:स्फुरित आवाज सुनकर बूधन एकदम विचलित हो जाता है। उसे चारों ओर खालीपन महसूस होता है। उसके मन की स्थिति डगमगाने लगती है।)

नेपथ्य से : ''बूधन...ओ बूधन'' *(की लयात्मक आवाज सुनाई पड़ती है, जो बढ़ रही है। जैसे चारों ओर से उस अंधेरी कोठरी में कोई उसे आवाजें लगा रहा है। वह बावला बनकर इधर-उधर देख रहा है। मन की उस विचलित स्थिति में उसे शारीरिक पीड़ा महसूस हो रही है। चारों पात्र ''बूधन...ओ बूधन'' बोलते हुए, एक जैसे ही अंदाज में चलते हुए बूधन को चारों ओर से घेर लेते हैं। पात्र 3, 4, 5, 6-इन चारों पात्रों में अशोक रॉय, सहायक सुप्रिटेन्डेन्ट संत्री, हवालदार हो सकते हैं। बूधन एकदम से तड़प उठता है। उसे लगने लगता है जैसे फिर से उस पर वही अत्याचार होने वाला है। उस अंधेरी कोठरी में राक्षस की छायाकृति में चारों पात्र बूधन के इर्द-गिर्द आकर उसे डराने लगते हैं और अपने हाथों के पंजों से डराते हुए बड़ी*

ही खौफनाक आवाज में बोलते हैं।)

पात्र 3,4,5,6 (सूत्रधार) : बूधन चोर है...

चोरी कबूल कर...

मारो साले को...

इलेक्ट्रिक शॉक दो...

पागल बना दो...

अंधेरी कोठरी...।

(आवाज का स्वर बढ़ाते हुए और गोल-गोल घूमते हुए)

पात्र 3,4,5,6 (सूत्रधार) : बूधन चोर है...

चोरी कबूल कर...

मारो साले को...

इलेक्ट्रिक शॉक दो...

पागल बना दो...

अंधेरी कोठरी...।

(आवाज को और तेज करते हुए और गोल-गोल घूमते हुए)

पात्र 3,4,5,6 : बूधन चोर है...

चोरी कबूल कर...

मारो साले को...

इलेक्ट्रिक शॉक दो...

पागल बना दो...

अँधेरी कोठरी...।

(एकदम उच्च स्वर में बोलते हुए सभी एकदम से शांत हो जाते हैं। इस दौरान बूधन अपने 'मानस' पर यह प्रहार सहन नहीं कर पाता और उसकी हालत अर्ध-पागल जैसी हो जाती है। बूधन को अहसास होता है जैसे वह चारों पात्र यमदूत का रूप लेकर आए हों और वे चारों पात्र धीरे-धीरे अपने हाथ फैलाकर, बूधन का सीना चीरकर उस में से उसकी आत्मा निकाल रहे हों...)

पात्र 3,4,5,6 (सूत्रधार) : (अपने हाथ को बूधन के सीने की ओर ले जाते हुए।)

मौत...

मौत...

मौत...

(आवाज को क्रमबद्ध बढ़ाते हुए। बूधन अपने पर हुए शारीरिक अत्याचार और कोठरी के उस अंधेरे में मानसिक असंतुलन को सहन नहीं कर पाता और हमेशा के लिए वह एक दर्दनाक 'चीख' के साथ हर तरह के अत्याचार से मुक्त हो जाता है। सब कुछ शांत हो जाता है। बिल्कुल शांत।)

दृश्य-8

(बूधन का शरीर लाश के रूप में पड़ा हुआ है। यहाँ सुप्रि. अपने साथियों के साथ बूधन की डॉक्टरी-जाँच करवाने के इरादे से आता है।)

पात्र 4 (सुप्रि.) : *(अंधेरी कोठरी में प्रवेश करते हुए)* आज...तो इस सबर की डॉक्टरी-जाँच करवानी ही पड़ेगी *(बूधन को नीचे पड़ा देख)*

उठाओ साले को...

(एक जेल कर्मचारी बूधन को लात मारता है। लेकिन बूधन की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। यह देख सुप्रि. आदि बूधन को उठाने की कोशिश करते हैं। लेकिन फिर भी बूधन की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। सुप्रि. बूधन की नाक पर उंगली रखकर साँस की जाँच करता है। फिर बूधन की छाती पर अपना कान रखकर धड़कन सुनने का प्रयास करता है। लेकिन शरीर की कोई भी क्रिया चालू न देख सुप्रि. घबरा जाता है।)

पात्र 4 (सुप्रि.) : ओ...माई गॉड...ये तो मर चुका है!

(ये सुनते ही सभी के चेहरे शुष्क हो जाते हैं)

पात्र 3 : साब, अगर ये बात बाहर गई तो हम सब के लिए मुसीबत खड़ी हो सकती है।

पात्र 4 (सुप्रि.) : हाँ। बात तो सही...लेकिन *(कुछ सोचने लगता है। थोड़ी देर बाद)* इसे पुलिस थाने से लाया गया था? बड़ाबाजार पुलिस थाने से?

पात्र 4 : हाँ...*(कुछ सोचने लगता है, कुछ सोचने के बाद सुप्रि. स्टेज के एक कोने में जाकर फोन लगाता है। वहीं दूसरी ओर बड़ाबाजार पुलिस थाने में अशोक रॉय सो रहा है। फोन की घंटी बजते ही, नींद में ही अशोक रॉय फोन उठाता है।)*

पात्र 3 (अशोक रॉय) : हल्लो...बड़ाबाजार पुलिस स्टेशन

पात्र 4 (सुप्रि.) : हल्लो...मैं पुरुलिया जेल का असिस्टेण्ड सुप्रिटेंडेण्ट बोल रहा हूँ।

पात्र 3 (अशोक रॉय) : हाँ...बोलिए जेलर साब।

पात्र 4 (सुप्रि.) : क्या मैं इन्स. अशोक रॉय से बात कर सकता हूँ?

पात्र 3 (अशोक रॉय) : हाँ...जी...बोल रहा हूँ।

पात्र 4 (सुप्रि.) : इन्सपेक्टर अशोक रॉय, कल शाम आपके थाने से एक आरोपी लाया गया था। बूधन सबर।

पात्र 3 (अशोक रॉय) : हाँ...हाँ...तो...?

पात्र 4 (सुप्रि.) : आपकी जानकारी के लिए अब 'वो' नहीं रहा।

(यह सुनते ही अशोक रॉय की नींद उड़ जाती है।)

पात्र 3 (अशोक रॉय) : क्या बात कर रहे हो...जेलर साब...? *(थोड़ा घबराकर)*

पात्र 4 (सुप्रि.) : जी...हाँ...शायद ज्यादा यातना की वजह से उसकी मौत हुई है...बूधन सबर पर हुई यातना आपकी हिरासत में भी हो सकती है और हमारी जेल में भी। सिक्के के दोनों पहलुओं की तरह हम लोग बराबर फंसे हुए हैं। अब सोचना यह है कि इस मुसीबत से छूटने के लिए किया क्या जाए...

पात्र 3 (अशोक रॉय) : *(बेफिक्री से)* अरे...करना क्या है? वही जो हमेशा से करते आए हैं। खुदकुशी।

पात्र 4 (सुप्रि.) : खुदकुशी...*(दोनों का अट्टहास। सुप्रि. फोन रखता है और बूधन की लाश के पास आकर खड़ा रहता है और संत्री को हुक्म देता है।)*

पात्र 4 (सुप्रि.) : तुम...जल्दी जाकर बाजार से एक गमछा ले आओ।

(संत्री जाकर गमछा ले आता है। इस बीच दूसरे साथी बूधन की लाश को खड़ा करते हैं। सुप्रि. गमछा बूधन के गले में डालकर ऊपर किसी चीज से बाँध देता ह। इस तरह उसकी हत्या को आत्महत्या का रूप देते हैं।)

पात्र 4 (सुप्रि.) : अब कोई भी नहीं कह सकता कि इसकी मौत...इसकी लाश को नीचे उतारो और इसके घर पहुँचा दो...

(बूधन की लाश नीचे उतारी जाती है और उसे उसके घर पहुँचाई जाती है।)

दृश्य-9

(बूधन की लाश पड़ी है। श्यामली दौड़ती हुई आती है। बूधन की लाश को देख उसके पैरों तले से जमीन सरक जाती है। थोड़ी देर के लिए वह मूर्ति-सी बन जाती है। उसे विश्वास ही नहीं होता कि उसके सामने बूधन की लाश पड़ी है।)

पात्र 2 (श्यामली) : बू...ध...न...बू...ध...न...क्या हुआ बूधन...तुम कुछ बोलते क्यों नहीं। बूधन ...देखो...देखो मैं श्यामली... तुम्हारी श्यामली...मुझे देखो बूधन...मुझसे बात करो बूधन...बूधन तुम चुप क्यों हो बूधन...तुम कुछ बोलते क्यों नहीं ?...उठो बूधन उठो, तुम मुझे छोड़कर नहीं जा सकते...

(बूधन की कोई प्रतिक्रिया न देख, श्यामली का दिल घबराने लगता है और चीख के साथ विलाप करती है।)

बू...ध...न...बूधन तुम मुझे छोड़ नहीं सकते...अरे...कोई मेरे बूधन को उठाओ रे...अरे...इसे कोई जगाओ रे...बूधन...बूधन...मुझे अपने साथ ले चलो...मैं...मैं न कहती थी बूधन वो लोग तुम्हें मार डालेंगे...। अरे...मार...डाला रे...मेरे बूधन को मार डाला...।

(श्यामली जोर जोर से चीखती है। बार-बार अपने हाथों से अपनी छाती को पीटती है। जोरों से चिल्लाने की वजह से उसके गले की नसें फूल जाती हैं। वह पागलों की तरह, बावरी बनकर अपने बूधन की लाश पर गिरकर रो रही है। इसी बीच अशोक रॉय और सहायक सुप्रि. उसके घर आते हैं।)

पात्र 4 (सुप्रि.) : ए...लड़की...तेरे पति ने जेल में गले में गमछा लगा कर आत्महत्या की है।

पात्र 3 (अशोक रॉय) : इसकी लाश को जल्दी से जल्दी जला दो...और वो भी हमारे सामने...और ये रोना-धोना बंद करो। जल्दी से जल्दी इसके क्रियाकर्म का इंतजाम करो। समझी।

(यह कहकर अशोक रॉय और सहायक सुप्रिटेन्डेन्ट चले जाते हैं। उनको जाते देख श्यामली घायल शेरनी बन जाती है। वह चिल्ला-चिल्ला कर उन पर अपने दिल की 'हाय' निकालती है।)

पात्र 2 (श्यामली) : गमछा...बूधन...तेरे पास तो कोई गमछा था ही नहीं तो फिर...अरे...सत्यानाश हो जाए तुम लोगों का...तुम्हारी बीवीयाँ बेवा हो जाएं...तुम्हारे बच्चे यतीम हो जाएं...अरे...कीड़े पड़के मरोगे तुम लोग...(उन्हें आवाज लगाते हुए) अरे...हरामी लोग...आओ...आओ...मेरा सुहाग छीनने वालो आओ...

(चिल्लाते-चिल्लाते जैसे वह टूट जाती है। फिर बूधन की लाश के पास जाकर।)

बूधन...इन्हीं लोगों ने तुम्हें मारा है न...मैं...मार डालूँगी इन हरामियों को...बूधन...

(श्यामली बूधन की लाश पर रो रही है। इसी दौरान एक आदमी (आशीष) महाश्वेता देवी का संदेश लेकर आता है।)

पात्र 6 : *(रोती हुई श्यामली से)* श्यामली, अम्मा (महाश्वेता देवी) ने संदेश भिजवाया है कि बूधन की लाश को किसी भी कीमत पर जलाया न जाए। किसी को पता न चले ऐसी जगह पर बूधन की लाश को दफना दो और पुलिस को धोखा देने के लिए बूधन की लाश का पुतला जला दो। ठीक है। समझ गई। और तुम बिल्कुल फिक्र मत करना हम सब समिति वाले और गाँव वाले अम्मा के साथ मिलकर उन जालिमों से बूधन की मौत का बदला लेकर रहेंगे।

(वह आदमी (आशीष) यह संदेश देकर चला जाता है। उसके जाने के बाद श्यामली धीरे-धीरे उठती है नेपथ्य में बूधन...बूधन की लयात्मक आवाज गूँज रही है। वह अपने ही घर में जमीन खोदकर, अपने दिल पर पत्थर रखकर बूधन की लाश को दफना देती है। और वहीं उसकी कब्र पर कुछ भी खाये-पीये बिना बावरी बन कर पड़ी रहती है। वहाँ दूसरी ओर बूधन की मौत का न्याय लेने के लिए जबरदस्त आंदोलन छिड़ गया है।)

(एक आंदोलनकारी समूह)

पात्र 3 (सूत्रधार) : बूधन ने आत्महत्या नहीं की थी, उसकी हत्या की गई है।

पात्र 4 (सूत्रधार) : बूधन का फिर से पोस्टमॉर्टम करवाओ।

पात्र 5 (सूत्रधार) : पुलिस ने बूधन की हत्या की है।

पात्र 6 (सूत्रधार) : बूधन निर्दोष था...।

पात्र 7 (सूत्रधार) : हमें इंसाफ चाहिए, इंसाफ चाहिए...

(और सभी चक्कर में घूमते हुए नारे लगाते हैं।)

सभी : हमें इंसाफ चाहिए।

पात्र 3 : बूधन हत्याकाँड की जांच की जाए। हमें चाहिए...

सभी : इंसाफ

पात्र 3 : बूधन के कातिलों को गिरफ्तार करो। हमें चाहिए...

सभी : इंसाफ

पात्र 5 : सबरों पर अत्याचार बंद करो...हमें चाहिए...

सभी : इंसाफ। हमें इंसाफ चाहिए, इंसाफ चाहिए।

(नारे लगाते हुए सभी एक लाइन में खड़े हो जाते हैं। फिर सभी अपना-अपना संवाद बोलकर अदालत का दृश्य बनाते हैं)

पात्र 3 : लोगों की आवाज पहुँची...

पात्र 4 : न्यायतंत्र जागा...

पात्र 5 : आखिर वो दिन आ गया...

पात्र 6 : न्याय का दिन...

पात्र 7 : दिनांक 21 फरवरी 1998 कोलकाता हाई कोर्ट

पात्र 3 (जज) : ऑर्डर...ऑर्डर। अदालत ने बूधन हत्याकाँड केस के सिलसिले में श्रीमती महाश्वेता देवी, एडवोकेट प्रदीप रॉय और जस्टिस डी. के. बसु की अपीलें सुनी। दूसरी ओर पोस्टमॉर्टम और सी. एफ. एस. एल (फोरेंसिकी) की रपट से ये साबित हो जाता है कि बूधन सबर ने आत्महत्या नहीं की थी। उसकी हत्या की गई थी। अदालत इस हत्याकांड में शामिल सभी पुलिस कर्मचारियों को निलम्बित करने का आदेश देती है। यह अदालत सरकार को बूधन सबर की बेवा श्यामली सबर को 1 लाख रुपया बतौर मुआवजा देने का हुक्म करती है तथा बूधन सबर हत्याकांड केस की गहन छानबीन के लिए सी बी आई को सौंपती है। इस अन्तिम फैसले के बाद सभी पात्र निश्चल खड़े हो जाते हैं। बूधन आत्मा के रूप में उठता है। बूधन की आत्मा दर्शकों को संबोधित करती है।

पात्र 1 (बूधन) : आखिर...आखिर कोई तो बताओ मेरा गुनाह क्या था ? मुझे क्यों मारा गया ? मैं तो...सिर्फ पान खा रहा था...क्या हमारे लिए पान खाना भी...मेरी बीबी बेवा हो गई...मेरा बच्चा यतीम हो गया...अब...मेरे बाद उनका क्या ? क्या...क्या मेरा गुनाह सिर्फ इतना है कि मैं...मैं एक सबर हूँ। एक डी एन टी ?

(बूधन की आत्मा के साथ-साथ जैसे डी एन टी की पूरी कायनात रो रही है। बूधन की आत्मा घुटनों के बल बैठ जाती है।)

(सभी पात्र अपना-अपना संवाद बोलकर एक अर्धचंद्राकार दृश्य बनाएगे।

पात्र 2 : यही सवाल। यही सवाल आज हरेक डी एन टी का है कि आखिर उन पर यह अत्याचार क्यों ?

पात्र 5 : डी एन टी कोई छोटा गुनाह करता है तो क्या उसकी सजा मौत है ?

पात्र 4 : डी एन टी में से कोई भणसाली पैदा नहीं हुआ।

पात्र 3 : डी एन टी में से कोई हर्षद मेहता पैदा नहीं हुआ।

पात्र 6 : किसी डी एन टी ने चारा काँड नहीं किया

पात्र 7 : किसी डी एन टी ने बोफोर्स काँड नहीं किया।

पात्र 2 : क्या हम दोयम दर्जे के नागरिक हैं ?

सभी : क्या हम दोयम दर्जे के नागरिक हैं ?
क्या हम दोयम दर्जे के नागरिक हैं ?
क्या हम दोयम दर्जे के नागरिक हैं ?

(सभी पात्र दोनों हाथों को उठाकर मानव श्रृंखला बनाते हैं।)

सभी : हमें चाहिए आत्म सम्मान... !
हमें चाहिए आत्म सम्मान... !
हमें चाहिए आत्म सम्मान... !

['बूधन' नाटक का अब तक गुजराती में कई बार मंचन हो चुका है। इसे हिन्दी में मंचन के लिए प्रकाशित कर रहे हैं। इस नाटक को छारानगर, अहमदाबाद के युवा कलाकार दक्षिण बजरंगे ने लिखा है, जो इसी समुदाय के हैं तथा इन्होंने अपने साथियों के साथ इसका सफल मंचन भी किया है।]

कौन हैं मुसहर?

□ संजय कुमार

आम धारणा यह है कि मुसहर चूहे खानेवाली एक जाति है। यह छवि हिकारत भरे नजरिये की निर्मिति है। मुसहर गंगा के मैदान के सबसे प्राचीन निवासी हैं। इस इलाके की फसलों की अच्छी पैदावार इनके ही श्रम का फल है। इनका समग्र जीवन प्रकृति के साथ रचा-बसा है। सामूहिकता इनके जीवन का मूल तत्व है।

मुसहर बिहार के सबसे बड़े जातीय समूहों में से एक है। सरकारी तौर पर छोटी जातियों के साथ गिनी जाने वाली यह जाति हिन्दू जाति व्यवस्था की सबसे निचली पायदान है। इसे हिंदू जाति तथा सामाजिक व्यवस्था में जगह तो दे दी गई है, पर यह साफ लगता है कि अभी इसके हिन्दूकरण की प्रक्रिया पूरी नहीं हुई है। गौर से देखने पर इस समुदाय के अनेक गुण आदिवासियों जैसे लगेंगे। यह समाज के सबसे पुराने समुदायों में से एक है और इसका दावा है कि यह भील आदिवासियों का वंशज है। मुसहर भले ही सदियों पहले आदिवासी समाज के दायरे से बाहर आ गए होंगे, पर हिन्दू समाज के वर्गीकरण में उनकी जगह नयी है और यह अभी तकपक्के रूप से तय नहीं है; उन्हें अभी भी अछूत मानकर कुल हिन्दू जातियों से अलग-अलग ही रखा जाता है। आदिवासी समुदाय तो अपनी स्वायत्त और स्वतंत्र जीवनशैली और संस्कृति के दायरे में रहते आए हैं पर उनसे विपरीत मुसहर एकदम बिखरे समुदाय के रूप में रहे हैं, वे हाशिए पर रहने के बावजूद भारतीय मुख्य समाज का हिस्सा रहे हैं और वे सांस्कृतिक या भौतिक रूप से 'अपना' कुछ अलग होने का दावा नहीं करते।

फिर भी उनका जीवन संघर्षों से भरा है। उनमें हिन्दूकरण की प्रक्रिया जारी है। इस प्रक्रिया में कई बार जाति और समुदाय के तनाव और उलझनें काफी बढ़ जाती हैं। मुख्य हिन्दू समाज के अभिन्न अंग बनकर और एक सम्मानित और विशिष्ट भागीदार के तौर पर जुड़ कर भी अपने पुराने इतिहास, पुरानी पहचान को विलीन नहीं कर सकते, उसे एक तरफ नहीं फेंक सकते। मुख्यधारा से जुड़ने और अपनी पहचान को उससे जोड़ने में व उनके तरीके से भी यह तनाव, यह उलझन साफ दिखती है। वे सीधे-सीधे राम से नहीं जुड़ सकते, लेकिन वे उनसे जुड़ना चाहते हैं। सो, वे शबरी के माध्यम से राम से जुड़ रहे हैं। वे शबरी को अपना एक विख्यात पूर्वज मानते हैं, वे मानते हैं कि शबरी ने खुद परखने के बाद जो रहस्यमय फल राम को खिलाए थे उसी ने राम को रावण पर जीत हासिल करने का बल दिया, प्रेरणा दी। शबरी जंगल में रहती थी और उसे वहां की जड़ी बूटियों और फलों की अज्छी पहचान थी, इन सबसे बड़ी बात यह है कि उसने अपने इस अनुभव और ज्ञान का लाभ राम को देकर उन्हें रावण पर आक्रमण करने को प्रेरित किया। आज मुसहर लोग शबरी को अलग मानते हैं और उसके अध्ययन से राम से एक रिश्ता बनाना चाहते हैं। इसके लिए वे शबरी मेला आयोजित करते हैं। यह मेला इस समुदाय की चेतना और भावनाओं को जगाने का अवसर बनने के साथ ही मुख्य हिन्दू समाज से उनके जुड़ाव की भावना को बढ़ाने वाला भी साबित हो रहा है।

इस समाज के मौजूदा विषमावस्था के तनावों और अपमानबोध को संभालने के लिए कबीरपंथियों ने बहुत ही सार्थक ढंग से हस्तक्षेप किया है। मानवीय व्यवहार करने वाले और जाति व्यवस्था में भरोसा न रखने वाले कबीरपंथी इस समुदाय को जाति व्यवस्था के कुंड से बाहर लाकर सामान्य मनुष्य वाला आदर और मान-सम्मान देने का प्रयास कर रहे हैं। वे यह काम मुसहर समाज के मनोभावों का सम्मान करते हुए और उनकी विशिष्ट जीवन पद्धति का हिस्सा बन कर कर रहे हैं। इससे उनके अंदर आत्मविश्वास आ रहा है, अपने वजूद का मतलब समझ आ रहा और अपने समाज-इतिहास पर गौरव करना आ रहा है।

हाल-बेहाल जीवन के लिए संघर्ष

मुसहर समुदाय की भौतिक स्थितियां ही उनकी सामाजिक स्थिति का काफी कुछ हाल बता देती है। दरअसल

सामाजिक स्थिति ही इस समुदाय की भौतिक स्थिति का आईना है। गरीब मुसहरों की सामाजिक विषमावस्था का हाल यही है कि उनके पास संपत्ति के नाम पर सामाजिक रूप से सांस्कृतिक पशु सूअरों के अलावा और कुछ नहीं है। सूअर उनके रोजाना के जीवन से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। अगर हम बाहरी आदमी की हैसियत से इस चीज पर गौर करेंगे तो लगेगा कि सूअरों के साथ इस समुदाय का दर्जा भी बहिष्कृत का ही है। लेकिन मुश्किल स्थितियों में सूअर ही इनके काम आते हैं।

पारंपरिक रूप से इस समुदाय के पास काफी जमीन हुआ करती थी, लेकिन अब नहीं है। मेहनत-मशक्कत से जीवन-बसर करने वाले मुसहर जमीन और मिट्टी को पहचानने तथा बिगड़े खेतों को सुधारने के काम में सबसे कुशल माने जाते हैं। पर जमीन से हाथ धो बैठे इस समुदाय के लोगों को 'कमिया' (बंधुआ मजदूर) बनकर रहना पड़ता है। खेती और ग्रामीण जीवन के सबसे घटिया व्यवहार का नमूना इस प्रथा में बाप-दादा द्वारा लिये गए थोड़े से कर्ज के एवज में पीढ़ी दर पीढ़ी संतानों को भी बेगारी करनी पड़ती है। अभी हाल तक वे अपना श्रम बेचने को भी आजाद नहीं थे। आज भी इस समुदाय के अधिकांश लोग भूमिहीन हैं, किसी और की जमीन पर बसे हैं और किसी न किसी समृद्ध किसान परिवार का मजदूर होकर जीवन बसर करते हैं। मुसहरों की कुल आबादी का 96.7 फीसदी हिस्सा खेत मजदूर है। बाकी लोग भी विभिन्न तरह के कामों और मजदूरी में लगे हैं। सबसे सस्ती दर पर मजदूरी करने वाले मुसहर बस 'कमाओ-खाओ' वाला जीवन ही बसर करते हैं और आज तक उनके लिए किसी खास पेशे वाला वर्गीकरण नहीं हुआ है। खेतों को काटने, मिट्टी सुधारने और नए खेत तैयार करने के उनके कौशल को आधुनिक मशीनों और तकनीक ने बेकार बना दिया है। अपना पेट पालने के लिए वे खेतों में बिखरे या चूहों द्वारा ले जाए गए अनाज को समेट लाने पर भी निर्भर हैं। इधर हाल में वे पंजाब, हरियाणा और दिल्ली पलायन करने लगे हैं और वहां बेहतर मजदूरी पर मुख्यतया खेतों में ही काम करने लगे हैं। सबसे मुश्किल स्थितियों में सूअरबाड़ों के साथ बने झोपड़ों और अछूत बस्तियों में रहनेवाले मुसहरों तक आधुनिक विकास की शायद ही कोई किरण पहुंची हो, इस विकास में उनके शामिल होने की बात तो बहुत दूर की चीज है। अब तक मात्र 2.5 फीसद साक्षरता दर होने के चलते निकट भविष्य में भी इस स्थिति में कोई ज्यादा सुधार होने के आसार नजर नहीं आते।

यह सही है कि मुसहरों का इतिहास कष्ट में जीवन जीने का इतिहास है और उनमें से अधिकांश ने सदियों से बिना जमीन जायजाद के जीवन बिताया है। इस सबके बावजूद वे न सिर्फ जीवित हैं, बल्कि अपनी पहचान, अपनी जीवंतता का दावा करते हैं। ये चीजें उनके ज्ञान, कौशल और संस्कृति की परंपरा का ठोस प्रमाण पेश करती हैं। अगर आज तक मुसहरों की परंपरा और संस्कृति लगभग अनजानी रही है तो यह हमारी इतिहास दृष्टि और समाज की सामान्य दृष्टि का ही दोष है। उनकी लोक संस्कृति और उनका लोक ज्ञान इस अनजान दुनिया को जगाने की हमारी कोशिश में मददगार हो सकते हैं।

लोक संस्कृति : भविष्य निर्माण का सपना

बहादुरी और लड़ाकूपन से भरे गौरवपूर्ण इतिहास के बारे में यही सूत्र हमारे सामने है। दुधबीर, रघुबीर, तुलसीबीर, दीना, भद्री वगैरह उनकी लोककथाओं, गीतों, समूहों, मूल्यों और लोक ज्ञान तथा चीजों को याद रखने की पारंपरिकता में बार-बार आते हैं, और इनसे यह समाज अपने जीवित रहने का संबल पाता है। उनकी अपनी कथाएं बताती है कि वे लोग कैसे बहादुर थे, समूह थे और छल-प्रपंच से दूर रहने वाले लोग थे। इसके साथ ही ये कथाएं यह भी बताती हैं कि किस तरह उनका जीवन उस रास्ते से भटका, किस तरह इसमें गलत चीजों का प्रवेश हुआ और इन बुराइयों के चलते वे किस तरह कमजोर और गुमनाम बनते गए।

अब शबरी उनकी ऐतिहासिकता को नया आयाम देती है। यद्यपि इनके अपने वीरों की प्रचलित कहानियां उनके वास्तविक इतिहास को नहीं बतातीं, लेकिन ये उनके मौजूदा सोच और उम्मीदों को तो सामने लाती ही हैं। अपने इतिहास के जरिए वे अपना भविष्य बनाने की जो शिक्षा ले रहे हैं, इसके लिए उनके अंदर जो अदम्य जिजीविषा और उत्साह है, उसको तो ये चीजें बताती ही हैं। इस सबके आधार पर एक चीज निश्चित रूप से कही जा सकती है कि वे अपने ''वर्तमान'' से अपना पिंड छुड़ाना चाहते हैं।

मुसहर गंदगी और नरक जैसी स्थितियों में सूअरों और सूअरबाड़ों के बीच रहते हैं, वे रोज सूअर खाते हैं, दारू पीते हैं। संभव है कि उनका यही जीवन न हो और न ही उनकी

मौजूदा विषमावस्था के लिए यही एक जिम्मेवार कारक हो। यह सही है कि दारू और सूअर उनके जीवन के केंद्र में हैं। ताड़ी या दारू एक लोक पेय है, सूअर एक वैसा ही खाद्य पशु है और ये दोनों चीजें मुसहर लोक जीवन, संस्कृति और सोच का अभिन्न हिस्सा हैं। वे सूअर खाकर जिंदा रहते हैं, अपने लोक देवी-देवताओं को प्रसाद के रूप में चढ़ाते हैं और अपनी वित्तीय परेशानियों के समय सूअर बेचकर ही काम चलाते हैं।

वे 'भविष्य' का ख्याल करना भी भूल गये हैं और ''कमाओ-खाओ'' के सीधे-सरल सोच से जीवन चलाते हैं। खेतों-खलिहानों में उनका काम करना उन्हें उत्पादक काम के साथ-साथ एक सांस्कृतिक आयोजन स्थान भी बना देता है और वहां से हमें निरंतर पुरुष और महिला, दोनों की आवाज में गाने सुनाई देते हैं। अपने लोक देवी-देवताओं को पूजने और अपने पर्व-त्यौहारों के साथ-साथ वे ''करमा'' (प्रकृति देव) और ''जीतिया'' की भी पूजा करते हैं।

लोक संस्कृति अपने आप में एक परिपूर्ण जीवित सत्ता है और यह किसी खास क्षेत्र के खास समुदाय से जुड़ी होती है। खास माहौल, प्राकृतिक स्थिति, लाभ, पर्यावरण, खास सामाजिक बनावट में कोई एक समुदाय अपने लिए सचेत रूप से एक दार्शनिक और वैचारिक जीवन पद्धति विकसित करता है। यह उसकी सफलताओं-असफलताओं, संघर्षों, विकास और पिछड़ेपन की बहाली करती है। इस लोक संस्कृति के विभिन्न रूपों —कथाओं, गानों, लोक नृत्यों, कहावतों-मुहावरों, मिथकों, पारंपरिक आख्यानों, खेलों, परंपराओं, रहस्यों, चुटकुलों और आराध्यों वगैरह के अध्ययन से इनके जीवन के अलग-अलग पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है।

अगर हमें मुसहर समाज के मन और उसकी दुनिया को समझना है तो हमें उसकी लोकसंस्कृति और लोक ज्ञान के सभी रूपों पर नजर डालनी होगी। यह काम तभी हो सकता है जब हम उसकी ऊपरी चुप्पी को तोड़ने के लिए उसके अंदर जाएं और उसके आतंरिक सूत्रों के अध्ययन से संवाद कायम करने में सफलता पाएं।

पर ये वैसी परंपराएं हैं जो कह सुन कर ही आगे बढ़ती हैं और इन्हें दूर रह कर या बिना भागीदारी किए नहीं समझा जा सकता।

पोथियों से बाहर एक समाज

यह सवाल लाजमी है कि समाज के हाशिए पर जीने वाले समूह और समुदाय की अन्त:प्रेरणा के स्रोतों को समझने में हम क्यों चूक जाते हैं। इनके कुछ कारण तो स्पष्ट हैं। इनमें एक बुनियादी कारण हमारी जाति व्यवस्था है जो एक-दूसरे के बारे में जानने-समझने और सोचने का अवसर ही प्रदान नहीं करती है। एक दूसरा कारण हमारे समाज की वर्गीय संरचना है जिसमें सबल जमात यह मानकर चलता है कि जो पिछड़े हैं, अविकसित हैं और गंदे पहनावे वाले हैं उनके बारे में और क्या जानना सिवाय इसके कि वे अपना श्रम बेचकर जीवन निर्वाह करते हैं। लेकिन जब मुसहरों की जिन्दगी और समाज से आप थोड़ा रू-ब-रू होंगे तो खुद यह एहसास कर पायेंगे कि ऐसे समूह को जानने और समझने के लिए खुद को 'डिलर्न' करना होगा। 'डिलर्न' पर हमारा जोर इस कारण है कि हमारे यहां जो सीखने की प्रक्रिया है उस पर छापा संस्कृति या लिखित संस्कृति का गहरा असर रहा है। हम जिस बात को और जिस तरीके से लिखित संस्कृति से सीख पाते हैं और दुनिया या समाज को जान पाते हैं उससे हम वैसे समाज को समझना चाहते हैं जो बिल्कुल मौखिक समाज है। मौखिक संस्कृति का दूर-दूर से रिश्ता छापा या लेखन की संस्कृति के साथ नहीं रहा है। आज भी मुसहर पुरुषों में महज तीन प्रतिशत साक्षरता दर है और महिलाओं में एक प्रतिशत से भी कम। कबीरपंथियों ने इनके बीच जो अपना असर पैदा किया है उसकी टेकनीक पर अगर हम गौर करें तो ऊपरी तौर पर बहुत ही मामूली लगेगा। वह टेकनीक है इनके लोक में जाकर इनके साथ संवाद बनाना। जाहिर है ऐसे समूह के लोक में आप तब तक प्रवेश नहीं कर सकते जब तक उनका आत्मविश्वास आपके ऊपर नहीं जमे। और यह विश्वास तब तक पैदा नहीं हो सकता जब तब उनके जीवन और रोज-ब-रोज की गतिविधियों में आप शरीक न हों। जैसे ही इनके बीच आप इस भूमिका में स्थापित होते हैं वे आपको अपना मित्र मानने लगते हैं तथा अपने समूह के एक अंग के रूप में आपके साथ व्यवहार करने लगते हैं। ऐसी स्थिति बनते ही आपको खुद यह एहसास होता है कि ऐसे समाज के बारे में लिखित संस्कृति से बनी हमारी यह धारणा कितनी गलत थी कि यह समुदाय एक चुप्पी में जीने वाला समुदाय है। इनके साथ जुड़ना एक तरह से खुद को इनके बीच आत्मसात् करना है।

❖

ऑल इंडिया बंजारा सेवा संघ

ऑल इंडिया बंजारा सेवा संघ (ए० आई० बी० एस० एस०) की 'राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति' (नेशनल एक्जिक्यूटिव कमेटी) तथा राज्य एवं महानगरों की शाखाओं के अध्यक्षों की 20 अगस्त, 2000 को महाराष्ट्र सदन, कॉपर्निकस मार्ग, नई दिल्ली में हुई संयुक्त बैठक का विवरण।

ए आई बी एस एस की द्वितीय कार्यकारिणी समिति की अत्यावश्यक बैठक की सूचना देनेवाले दिनांक 3 अगस्त, 2000 के नोटिस के अनुसार यह बैठक आन्ध्र प्रदेश भवन, जसवंत सिंह रोड, नई दिल्ली में दिनांक 20 अगस्त, 2000 को प्रात: 10 बजे तय थी। दुर्भाग्यवश आन्ध्रप्रदेश भवन के प्रबन्धकों ने अध्यक्ष श्री रंजीत नाइक को अन्तिम समय में दिनांक 19 अगस्त को यह सूचित किया कि ए आई बी एस एस की यह बैठक उनके परिसर में संभव नहीं हो सकेगी क्योंकि उसी समय मुख्यमंत्री, आंधप्रदेश ने अन्य राज्यों की मुख्यमंत्रियों की बैठक उसी हॉल में बुलाई है, जहाँ यह कार्यक्रम होना तय था। अत: हमने श्री मखरम पवार, माननीय मंत्री महाराष्ट्र तथा उनके पार्टी सहयोगी श्री राजेश अधिकारी की सहायता से महाराष्ट्र सदन के छोटे से कान्फ्रेंस हॉल में इस बैठक की व्यवस्था की जहाँ कि मात्र 30 व्यक्ति ही बैठ सकते थे, 70 व्यक्तियों ने कष्ट में इस बैठक में हिस्सा लिया।

बैठक में निम्नलिखित राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के सदस्यों, राज्य एवं महानगरों की शाखाओं के अध्यक्षों एवं आमंत्रित अतिथियों तथा कुछ दर्शकों ने हिस्सा लिया।

1. श्री रंजीत नाइक—अध्यक्ष, ए आई बी एस एस
2. श्री मखरम पवार—कार्यकारी अध्यक्ष, ए आई बी एस एस तथा माननीय मंत्री, महाराष्ट्र सरकार
3. श्री बाबूराव चौहान—कार्यकारी अध्यक्ष, ए आई बी एस एस तथा माननीय मंत्री, कर्नाटक सरकार
4. श्री (डॉ०) एम० शंकर नाइक—अध्यक्ष, ए आई बी एस एस, कर्नाटक राज्य तथा भूतपूर्व मंत्री, कर्नाटक सरकार
5. श्री डी० रवीन्द्र नाइक—उपाध्यक्ष, ए आई बी एस एस, भूतपूर्व मंत्री, आंधप्रदेश सरकार तथा पूर्व सदस्य अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार
6. श्री के० जी० बंजारा—महासचिव, ए आई बी एस एस, गुजरात
7. श्री सी० एस० कल्याण नाइक—महासचिव, ए आई बी एस एस, कर्नाटक
8. प्रो० अभयसिंह परमार—सदस्य राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, ए आई बी एस एस तथा महासचिव, हिमाचल प्रदेश
9. श्री उत्तमसिंह चौहान—महासचिव, ए आई बी एस एस, ललितपुर, उत्तर प्रदेश
10. श्री नवलसिंह पवार—सदस्य राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति, इन्दौर, मध्य प्रदेश
11. श्री श्रवणसिंह राठौर—अध्यक्ष, ए आई बी एस एस, मध्यप्रदेश शाखा
12. श्री के० बी० जाधव—अध्यक्ष ए आई बी एस एस, महाराष्ट्र शाखा
13. श्री शंकर जाधव—महासचिव, ए आई बी एस एस, मुंबई
14. श्री टी० किशनसिंह—अध्यक्ष ए आई बी एस एस, आन्ध्रप्रदेश शाखा
15. श्री मदनसिंह चौहान—अध्यक्ष, ए आई बी एस एस, राजस्थान शाखा

कार्यकारिणी की बैठक में हुए विचार-विमर्श की विशिष्ट बातें तथा मुख्य फैसले निम्नलिखित हैं—

—संघ के अध्यक्ष श्री रंजीत नाइक ने प्रथम राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति की बैठक, (जो कि 9-10 मार्च, 1999 को दिल्ली में सम्पन्न हुई थी) के बाद की संघ की गतिविधियों पर संक्षिप्त रिपोर्ट प्रस्तुत किया। उन्होंने प्रथम

जनरल काउंसिल की बैठक (ए आई बी एस एस के नये पंजीकरण के बाद), जो कि गांधीनगर में 25-26 दिसम्बर 1999 को संपन्न हुई थी, को ऐतिहासिक घटना बताया। यह उनके जीवन तथा ए आई बी एस एस एस के 47 साल के इतिहास में अविस्मरणीय घटना थी जिसमें महासभा (जनरल काउंसिल) का पूर्ण कोरम जिसमें कि सभी राज्यों तथा महानगरों की शाखाओं के प्रतिनिधि हैं, सम्मिलित हुए। इस बैठक का सारा खर्च तथा सामाजिक, सांस्कृतिक एवं व्यवस्थागत कार्यों का प्रबंध श्री डी जी बंजारा, आई पी एस, श्री के जी बंजारा निजी सचिव, समाज कल्याण मंत्री तथा गुजरात के बंजारा कार्यकर्त्ताओं ने किया।

संघ के अध्यक्ष ने राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सभी सदस्यों तथा शाखा अध्यक्षों से अपने-अपने राज्यों तथा महानगरों में जिला/तहसील/मंडल तथा ग्राम/तांडा शाखाएं अत्यंत प्राथमिकता से गठित करने की अपील की ताकि संगठनात्मक कार्य पूर्ण हो सकें। संघ के आगामी कार्यों की चर्चा करते हुए अध्यक्ष ने कहा कि इसके बाद संघ के संविधान के अनुरूप हर तरह की सदस्यता के लिए अभियान चलाया जाए तथा कोषवृद्धि हेतु दान-अनुदान इकट्ठा किया जाए।

श्री रंजीत नाइक ने इस बैठक के मुख्य कारण को स्पष्ट किया तथा कहा कि बैठक का उद्देश्य है, "उन बचे हुए राज्यों (जिन राज्यों में अभी तक नहीं हैं) में बंजारों का नाम भारतीय संविधान की अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कराना।" उन्होंने बताया कि इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु ए आई बी एस एस ने पांच पहुंच मार्ग स्वीकार किए हैं, जिन्हें साथ-साथ कार्यान्वित किया जाना चाहिए। उन्होंने प्रत्येक मार्ग के फायदे-नुकसान, उनसे उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रियाओं, उनका आगा-पीछा एवं निहित खतरों की विस्तृत चर्चा की और कहा कि हमारे पास अधिकारों तथा उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संघर्ष के अतिरिक्त कोई और रास्ता नहीं है। यदि हम यह नहीं करेंगे तो हमारे पास जो अधिकार तथा लाभ कुछ राज्यों में प्राप्त भी हैं उन्हें हमारे शत्रु समाप्त करने की कोशिश करेंगे। उन्होंने ऐसी परिस्थिति में भाग ले रहे सभी नेताओं तथा प्रतिनिधियों से यह अपील की कि वे इस समस्या पर गम्भीरता से विचार करें, इसकी सामाजिक-राजनैतिक जटिलताओं को समझें और साथ ही उन समुदायों, जो कि विगत 52 वर्षों से अनुसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में हैं तथा उसके लाभ के उपभोगी हैं, और आज वे सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक रूप से इतने आगे बढ़ चुके हैं कि अपने हितों की रक्षा कर सकें, की ओर से संभावित क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं एवं प्रति-प्रतिक्रियाओं को समझें। इस परिस्थिति में हमें बहुत सोच-समझ कर तथा जिम्मेदारी के साथ इस बैठक में फैसले लेने हैं।

आज हमारे पास उन राज्यों में, जहाँ कि बंजारों को अनुसूचित जनजाति की सूची में नहीं रखा गया है, सम्मिलित कराने का एक सुनहरा मौका है जो कि राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की केंद्र सरकार द्वारा न्यामूर्ति श्री वेंकटचलैया की अध्यक्षता में 'भारत के संविधान के कार्यकरण की समीक्षा हेतु आयोग' के गठन से प्राप्त हुआ है। परन्तु इसके लिए समय कम है।

इसके बाद श्री रंजीत नाइक ने श्रोताओं से श्री एच एन देवराजन, एडवोकेट, उच्चतम न्यायालय का परिचय करवाया तथा उनसे अनुरोध किया कि वे उन विभिन्न कानूनी मंचों के मार्गों का स्पष्टीकरण करें जो कि विभिन्न श्रेणियों एवं समय पर रिट याचिका के लिए उपलब्ध हैं तथा जिनके द्वारा यह रिट याचिका विभिन्न राज्यों के उच्च न्यायालयों तथा अन्ततः उच्चतम न्यायालय में दायर की जा सकती है। इस पर श्री के जी बंजारा, महासचिव, ए आई बी एस एस ने टिप्पणी करते हुए कहा कि कानूनी मंचों का मार्ग अन्तिम विकल्प के रूप में अपनाया जाना चाहिए। उन्होंने यह राय व्यक्ति की कि पहले जो चार पहुंच मार्ग हैं, हमें उन पर एक साथ कार्य करना चाहिए। सर्वप्रथम यह प्रयास होना चाहिए कि हर राज्य में बंजारा को तथा उनके समानार्थियों को, जहाँ की बंजारा जनसंख्या है और उन्हें अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति में शामिल नहीं किया गया है, शामिल करने की अनुशंसा हो। श्री के जी बंजारा ने इस बात पर जोर दिया कि हमें निम्नतर रूपरेखा में काम करना चाहिए न कि जनमंचों तथा मीडिया के द्वारा बड़ी-बड़ी बातें करने तथा ऊँची घोषणाएँ करने का रास्ता अख्तियार करना चाहिए जो अकारण ही हमारे विरोधियों को जगा और उकसा सकता है। उन्होंने आगे कहा कि इस तरह की कलाबाजियाँ, राजनैतिक सरलीकरण एवं प्रचार हमारे मजबूत और अच्छे मुद्दे को बिगाड़ देंगे। श्री के० जी० बंजारा ने संघ के अध्यक्ष श्री

रंजीत नाइक की उनकी सुव्यवस्थित कार्यपद्धति तथा विगत दो वर्षों के अन्तर्गत इतने मात्रात्मक एवं वृहद् कागजी कार्यवाही, जिससे कि देश के बंजारों के बीच चेतना-जाग्रत हुई है और उनमें एकता हुई है तथा 'ए आई बी एस एस' का संस्थागत ढांचा खड़ा हुआ है जो आज सुनियोजित एवं लोकतांत्रिक ढंग से आम सहमति से कार्य कर रहा है, के लिए भूरि-भूरि प्रशंसा की। इतना सारा अध्ययन व संवेदनशील लेखन, उसकी छपाई तथा साथ ही निर्देशिकाओं का पूरे भारत वर्ष में वितरण हो जिससे कि सारा कागजी कार्य सभी प्रमुख नेताओं, सभी पच्चीस शाखाओं के कार्यकर्त्ताओं तक पहुंच सके, यह ए आई बी एस एस के विगत 44 वर्षों के आन्दोलन के इतिहास में अनोखी घटना है। हमारे राष्ट्रीय अध्यक्ष के इन प्रयासों ने हमारे देश के बंजारों में यह भाव पैदा किया है कि राष्ट्रीय स्तर पर यह एक सही नेतृत्व है जिसकी विश्वसनीयता है तथा जिसके पास ऐसे कार्यक्रम हैं जो बंजारों के सामाजिक आन्दोलन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकते हैं। लोग धीरे-धीरे ए आई बी एस एस के पीछे एकबद्ध हो रहे हैं। हम आशावादी हैं कि आगामी कुछ एक वर्षों में ए आई बी एस एस बंजारों की अखंड संस्था होगी जैसे कि देश की कोई भी राष्ट्रीय राजनीतिक पार्टी। लगभग यही बातें श्री सुरजनलाल पवार, अध्यक्ष दिल्ली प्रांत शाखा, श्री उत्तमसिंह चौहान, महासचिव, उत्तर प्रदेश शाखा, श्री मक्खन सिंह राठौर, अध्यक्ष चण्डीगढ़ शाखा, श्री (डॉ०) एम० शंकर नाइक, अध्यक्ष, कर्नाटक प्रांत शाखा श्री सुन्दर लाल मुचल, अध्यक्ष, पंजाब शाखा, श्री अभयसिंह परमार, राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति सदस्य तथा महासचिव हिमाचल प्रदेश, श्री रणवीरसिंह, उपाध्यक्ष, उ० प्र० शाखा एवं श्री रोशनलाल राठौर, महासचिव, ए आई बी एस एस ने कहीं।

एडवोकेट श्री एच देवराजन ने सभा में स्पष्ट करते हुए आगे कहा कि इससे पहले कि हम विभिन्न राज्यों के उच्च न्यायालयों में जहां अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति की सूची में बंजारों का नाम नहीं है, के लिए संघ की तरफ से रिट याचिका दायर करने हेतु उचित एवं सही बिन्दुओं की खोज करनी होगी। हमें यह पता लगाना पड़ेगा कि कौन से कानूनी बिन्दु हैं तथा ऐतिहासिक, मानवशास्त्री खोजें, सच्चाईयाँ व सन्दर्भ हैं जो कि भारत सरकार द्वारा समय-समय पर गठित विभिन्न आयोगों द्वारा उपलब्ध कराई गई हैं। साथ ही हमें भारत सरकार द्वारा जारी विभिन्न आदेशों, लोकसभा द्वारा संविधान की धारा 341 व 342 (जो कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों से संबंधित हैं) में समय-समय पर किए गए परिवर्तनों तथा इन्हीं धाराओं से संबंधित उच्च न्यायालयों व उच्चतम न्यायालय के विभिन्न फैसलों को ध्यान से पढ़ना होगा ताकि यह स्पष्ट हो सके कि हमारे केस हेतु क्या हमारे पक्ष में जाता है तथा क्या विपक्ष में। इसके बाद ही हम कानूनी मंचों पर जा सकते हैं। एक एडवोकेट की हैसियत से उन्होंने कहा कि वे सभी सावधानी बरतेंगे, कानूनी प्रक्रियात्मक तथा सच्चाई पर आधारित साक्ष्यों का पता लगाएंगे और किसी समुदाय को अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति में रखा जाए अथवा नहीं को चुनौती देने के लिए उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय के इस सन्दर्भ में दिए गए फैसलों को भी सन्दर्भित करेंगे। इन सारी जानकारियों को एकत्रित कर वे इस केस के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा हेतु पुनः राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के पास आएंगे और संघ का विश्वास प्राप्त करने के बाद संघ के फैसले के अनुरूप ही रिट याचिका दायर करेंगे।

चूंकि भारतीय संविधान की धारा 32 के अनुसार हम रिट याचिका सीधे उच्चतम न्यायालय में दायर नहीं कर सकते। अतः हमें पहले याचिकाएं विभिन्न उच्च न्यायालयों में दायर करनी होगी। उसके बाद हमें उच्चतम न्यायालय से यह अनुरोध करना होगा कि विभिन्न उच्च न्यायालयों में ए आई बी एस एस की याचिकाओं को उच्चतम न्यायालय को लेना चाहिए और इस पर फैसला देना चाहिए, क्योंकि उनकी विषय- वस्तु एक है और वह एक ही समुदाय, यानी देश के बंजारों से संबंधित हैं।

इस रिट याचिका को लिखने हेतु तथा विभिन्न सन्दर्भों, साक्ष्यों को इकट्ठा करने हेतु उन्होंने शिक्षित, ज्ञानवान तथा कानूनी ज्ञान रखने वाले व इस कार्य में रुचि रखने वाले लोगों की एक समिति के गठन का सुझाव रखा।

उन्होंने इस समिति में विभिन्न संकायों के जानकार लोगों को भी रखने का सुझाव रखा ताकि वे आपस में मिल सकें और एडवोकेट श्री देवराजन के साथ मिलकर रिट याचिका के मसौदे को अन्तिम रूप दे सकें।

कानून एवं अन्य विशेषज्ञों की ए आई बी एस एस की समिति

(1) श्री एच देवराजन
(2) श्री रंजीत नाइक
(3) अभयसिंह परमार
(4) डॉ० एम शंकर नाइक
(5) श्री के जी बंजारा
(6) श्री डी रवीन्द्र नाइक
(7) श्री उत्तमसिंह चौहान
(8) श्री सुन्दरलाल मुचल
(9) श्री सर्वेश्वर नाइक
(10) श्री अमरसिंह तिलावत
(11) श्री मनोहर एनापुर
(12) श्री कल्याण नाइक
(13) श्री रोशनलाल राठौर
(14) श्री मदनसिंह राठौर
(15) श्री श्रवणसिंह राठौर

श्री देवराजन ने इस बात पर जोर दिया कि यह प्रक्रिया काफी समय लेगी तथा खर्चीली भी होगी। अत: यह उचित होगा कि संघ द्वारा सुझाए गए अन्य चार मार्गों पर पहले एक साथ कार्य प्रारम्भ हों। इस बीच हम कानूनी मंचों तक जाने के लिए तैयारी पूरी कर लेंगे। इस तरह ऐसी स्थिति में जबकि यदि चारों मार्गों पर असफलता मिल चुकी हो तो हमारे पास कानूनी कार्रवाई का रास्ता तैयार रहेगा। यह सर्वमत से स्वीकार किया गया।

श्री एच देवराजन ने निम्नलिखित व्यक्तियों की कानूनी मंचों पर जाने से संबंधित विभिन्न शंकाओं का समाधान किया।

(1) श्री के जी बंजारा
(2) श्री उत्तमसिंह चौहान
(3) डॉ० एम शंकर नाइक
(4) श्री सुन्दरलाल मुच्चाल
(5) श्री डी रवीन्द्र नाइक
(6) श्री मक्खनसिंह राठौर
(7) श्री स्वरूपसिंह नाइक (उ० प्र० से एक सम्मानित अतिथि)
(8) श्री राजू नाइक
(9) श्री रोशनलाल राठौर

तदुपरांत निम्नलिखित अन्य चार पहुंच मार्गों पर चर्चा शुरू हुई जो अंशत: प्रात:कालीन सत्र एवं विस्तृत रूप मे अपराह्न सत्र में (2.30 बजे से 5.30 बजे तक) चली।

इस बीच श्री मखरम पवार, माननीय मंत्री, महाराष्ट्र सरकार तथा कार्यिक (Working) अध्यक्ष ए आई बी एस एस, सभा भवन में उपस्थित हुए तथा उन्होंने बंजारों को अनुसूचित जनजाति की सूची में सम्मिलित किए जाने से संबंधित विभिन्न पहुंच मार्गों पर विस्तृत चर्चा की। प्रात:कालीन सत्र में श्री मखरम पवार ने इस महत्वपूर्ण बात पर जोर दिया कि संघ बंजारों के लिए एक पहचान चिह्न की खोज करे जिससे आम भीड़ में बंजारों की एक अलग पहचान बन सके। उन्होंने कहा कि पुराने दिनों में हमारे आदमियों और विशेष तौर पर औरतों के पास चिह्नित करने के लिए रंगीन, विशिष्ट तथा उत्कृष्ट कपड़े एवं गहने होते थे। हमारी दूसरी पहचान हमारी बंजारा बोली, 'गोड़' (Gore) बोली थी, जो कि पूरे देश में बोली जाती थी तथा तीसरी पहचान थी हमारा बन्जारा 'तांडा', हमारी एक विशिष्ट बस्ती। ये सभी पहचान आधुनिकीकरण, शिक्षा, वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया जैसे टी० वी० के हरेक जगह पहुंचने और साथ ही साथ औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण धीरे-धीरे लुप्त हो रही है जोकि विकास की इस प्रक्रिया में स्वाभाविक ही है। अत: हमें पहचान योग्य ऐसा चिह्न ढूंढ़ना होगा जो कि स्त्री व पुरुष दोनों के लिए सुविधानजक तथा पढ़े-लिखे व साक्षर एवं आधुनिकतावादी विचार रखने वाले सभी लोगों के लिए रुचिकर भी हो। श्री पवार के इस वक्तव्य के साथ प्रात:कालीन सत्र का समापन हुआ।

ए आई बी एस एस द्वारा आयोजित भोजन तथा माध्यांतर के उपरान्त अपराह्न सत्र (2.30 से 5 बजे तक) प्रारम्भ हुआ।

इस सत्र में पाँचों पहुंच मार्गों पर विस्तृत चर्चा हुई जिसमें उपस्थिति सभी लोगों ने भाग लिया। इस चर्चा में राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्यों, विशिष्ट अतिथियों, राज्य एवं महानगरों की शाखाओं के अध्यक्षों एवं अन्य पदाधिकारियों व सम्मानित अतिथियों ने भी हिस्सा लिया। चर्चा सौहार्दपूर्ण वातावरण में हुई तथा निष्कर्षपूर्ण, सकारात्मक थी और भावना

एवं उत्साह से भरी हुई थी। अन्ततः यह तय किया गया कि प्रत्येक मार्ग पर विस्तृत व पूर्ण चर्चा होनी चाहिए तथा उसकी छानबीन होनी चाहिए और इन मार्गों द्वारा अपने उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्रयास भी होने चाहिए। भाग ले रहे प्रतिनिधियों द्वारा प्रत्येक विकल्प की महत्ता पर विस्तृत चर्चा हुई व निम्नलिखित फैसले लिए गए।

मार्ग-1 : न्यायमूर्ति श्री वेंकटचलैया (अध्यक्ष, भारत के संविधान के कार्यकरण की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग) तक अपनी बात पहुँचाना। ए आई बी एस एस द्वारा समस्त दस्तावेज़ों, साक्ष्यों तथा संभव तरीकों से यह कार्य शुरू किया जा चुका है। परन्तु प्रत्येक राज्य शाखाओं को यह देखना चाहिए कि उनकी सिफारिशें भारत सरकार तक पहुंचे तथा उसकी एक प्रति न्यायमूर्ति श्री वेंकटचलैया को भेजी जाए। ए आई बी एस एस ने इस सन्दर्भ में लिखित निर्देश दिए हैं तथा सभी शाखाओं को इस पर अविलम्ब कार्यवाही करनी चाहिए।

मार्ग-2 : केन्द्र की राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन सरकार तक प्रस्ताव पहुँचाना। इस कार्य हेतु प्रत्येक राज्य शाखा अपने राज्य के राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्य के साथ राज्यपाल, मुख्यमंत्री एवं समाज कल्याण मंत्री तथा उस राज्य के चुने हुए जनप्रतिनिधियों (विशेष तौर पर लोकसभा सदस्य) से मिलें तथा उनके माध्यम से भारत सरकार पर सिफारिश कर यह दबाव डालें कि बंजारा तथा उनकी समानार्थी जातियों को एक मुख्य जनजाति के रूप में जिसका विवरण तालिका 'क' में दर्शाया गया है तथा जो हमारे मुख्य ज्ञापन के साथ संलग्न है तथा ए आई बी एस एस एवं उसकी राज्य शाखाओं द्वारा भारत के संविधान के कार्यकरण की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग को दिया जा चुका है, को भी अनुसूचित जनजाति की सूची में शामिल किया जाए। यह राज्य एवं महानगरों की शाखाओं द्वारा किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण कार्य है जिसके बिना कोई भी प्रभावी कार्य नहीं हो सकेगा। अतः उन राज्य शाखाओं, जहां कि बंजारा किसी भी सूची में नहीं हैं, की यह जिम्मेदारी है कि वे अपने राज्य सरकारों द्वारा भारत सरकार को इस आशय की सिफारिश भिजवाने के लिए ईमानदारी से प्रयास करें। इस कार्य हेतु यदि इन शाखाओं को सहायता की आवश्यकता हो अथवा ए आई बी एस एस के अध्यक्ष व अन्य पदाधिकारियों की राज्यपाल, मुख्यमंत्री से मिलने की आवश्यकता हो तो कृपया बिना हिचकिचाहट हमें अपने मुख्यालय पर बुलाएं और यदि संभव हो तो इन विशिष्ट व्यक्तियों से पूर्व समय ले लें। कृपया यह ध्यान दें कि यह समस्त कार्य तीन-चार महीने के समय में पूर्ण होना है, क्योंकि ये मुद्दे केन्द्र की राष्ट्रीय जनतांत्रिक सरकार तथा भारत के संविधान के कार्यकरण की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग के समक्ष सक्रियता से विचाराधीन है। बंजारों तथा ऐसे ही अन्य पिछड़े समुदायों और कमज़ोर तबकों के इस भाग्यपूर्ण फैसले के लिए कोई समय नहीं बचा है। यह आपके लिए परीक्षा की घड़ी है और आप यह साबित करें कि आप राज्य के बंजारों के सही प्रतिनिधि नेता हैं।

इस चर्चा के दौरान श्री रवीन्द्र नाइक ने यह सुझाव रखा कि अंग्रेजी विवरण 'ऑल इंडिया बंजारा सेवा संघ (ए आई बी एस एस) का हिन्दी रूपान्तर 'अखिल भारतीय बंजारा सेवा संघ (ए बी बी एस एस)' होना चाहिए तथा उसे पत्रावली आदि पर अंकित करना चाहिए। इस सुझाव पर श्री माखरम पवार, श्री रंजीत नाइक तथा अन्य कई नेआतों ने स्पष्टीकरण दिया कि वर्ष 1981 में श्री मखरम पवार तथा उनके 'महाराष्ट्र युवक मंडल' के सहयोगियों व ए० आई० बी० एस० एस० के पुराने नेताओं जैसे श्री रामसिंह भानावत जी, स्वर्गीय श्री भानूसिंह जी राठौर एवं समाज के अन्य सहयोगियों द्वारा 'अखिल भारतीय बंजारा सेवा संघ ए बी बी एस एस)' नाम से एक संस्था पंजीकृत की गई थी। इसका पंजीकरण सहायक पूर्त आयुक्त (ए सी सी) कार्यालय, अकोला, महाराष्ट्र में निम्नलिखित 19 हस्ताक्षरकर्ता न्यासियों द्वारा हुआ था।

क्रम सं० न्यासियों के नाम	*पद*	*टिप्पणी*
1. श्री बाबूसिंहदगदूसिंह राठौर	अध्यक्ष	स्वर्गीय
2. श्री हीरासिंह सदा पवार	उपाध्यक्ष	''
3. श्री रामसिंह फकरीजी भानावत	महासचिव	
4. श्री सखाराम धावजी मुड़े	कोषाध्यक्ष	स्वर्गीय
5. श्री कोमलसिंह लालसिंह अड़े	सदस्य	''
6. श्री गजाधर रामसिंह राठौर	सदस्य	
7. श्री विजयसिंह भगवानसिंह नाइक	सदस्य	
8. श्री आत्माराम कनिराम राठौर	सदस्य	
9. श्री मखरम भादूजी पवार	सचिव	
10. श्री कन्हइयालाल बूगाजी जाधव	उपाध्यक्ष	

11. श्री भोपीदास राठौर	सदस्य	
12. श्रीमती रेखा केसरसिंह राठौर	सदस्य	
13. श्री लक्ष्मण सोबा राठौर	सदस्य	
14. श्री दुर्गादास किसनदास राठौर	सचिव	
15. श्री प्रभु लक्ष्मण अड़े	सदस्य	
16. श्रीमती देवयानी लालसिंह पवार	सदस्य	
17. श्री बंसीलाल सोमला जाधव	सदस्य	
18. श्री सोनबा चन्दू नाईक	सदस्य	स्वर्गीय
19. श्री बाबूसिंह पाण्डू पवार	सदस्य	

ए बी बी एस एस का पूर्व संविधान मराठी भाषा में था तथा यह 1981 में पंजीकृत हुआ था। विगत 18 वर्षों में एक बार भी लेखा परीक्षा नहीं हुई तथा न ही कोई परिवर्तन की रिपोर्ट सहायक पूर्त आयुक्त के अकोला कार्यालय में जमा हुई। इस कार्यालय से 1981 के पंजीकरण से संबंधित कागजों के अतिरिक्त कोई भी अन्य कागज प्राप्त नहीं हुआ। इस बीच 19 न्यासियों में से पांच न्यासी स्वर्गवासी हुए और यह सूचना भी अकोला कार्यालय को नहीं दी गई। इन परिस्थितियों में तथा सहायक पूर्त आयुंक्त कार्यालय, अकोला से पूछताछ करने पर हमें मालूम हुआ कि संघ के पूर्व पंजीकृत शीर्षक ए बी बी एस एस को पुनर्जीवित करना असंभव है। ए आई बी एस एस का नया नेतृत्व पुराने शीर्षक व उस संस्था को जो पूर्णत: अपंग हो चुकी है, को पुनर्जीवित करने में शायद दो या तीन वर्ष का अपना समय निरर्थक ही गँवाएगा। अत: जीवित 13 संस्थापक न्यासियों ने सहायक पूर्त आयुक्त, अकोला के पास एक आवेदन पत्र दाखिल कर पूर्व पंजीकृत 'अखिल भारतीय बंजारा सेवा संघ' को भंग करा दिया। इन परिस्थितियों में कानून की तथा मुम्बई पब्लिक ट्रस्ट अधिनियम, 1950 की धाराओं के अन्तर्गत ए आई बी एस एस पंजीकृत किया गया है। अत: पूर्व भंग शीर्षक ए आई बी एस एस का इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है। चूंकि वर्तमान पंजीकृत नाम ए आई बी एस एस ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी (ए आई सी सी) के अनुरूप है अत: हम पंजीकृत नाम और शीर्षक अंग्रेजी अक्षरों या हिन्दी अक्षरों में या अन्य किसी भी भारतीय भाषा के अक्षरों में लिखें तब भी पंजीकृत नाम तथा शीर्षक ए आई बी एस एस अनुवादित कर नहीं लिखा जा सकता। अत: किसी भी भारतीय भाषा में अनुवादित नाम तथा शीर्षक कानून तथा मुम्बई पब्लिक ट्रस्ट अधिनियम, 1950 के अनुसार गैर कानूनी होगा। परन्तु वही पंजीकृत नाम तथा शीर्षक हिन्दी या किसी भी अन्य भाषा के अक्षरों में बिना अनुवाद किये लिखा जा सकता है जो कि पहले ही हमारे पत्रावली तथा अन्य स्टेशनरी पर मौजूद है। दूसरा महत्वपूर्ण कारक यह है कि मूल व संस्थापक नाम व शीर्षक दिगरास की प्रथम गोष्ठी में 'ऑल इंडिया बंजारा सेवा संघ (ए बी बी एस एस)' था जो हमारे महान संस्थापक नेता स्व० श्री वसन्त राव नाइक द्वारा संस्थापित किया गया था—अत: यह पूर्णत: कानूनी एवं तकनीकी मामला ही नहीं आवश्यकता भी है। इन सभी मसलों पर, नए नेतृत्व के, मई, 1998 में नेतृत्व ग्रहण करने के बाद कई बार विभिन्न बैठकों में विचार-विमर्श हुआ है और बहुत पहले ही सुलझाया जा चुका है। श्री डी० रवीन्द्र नाइक उस समय के संघ के महासचिव के रूप में इन सभी फैसलों के हिस्सेदार थे।

यह सम्पूर्ण एवं सुविस्तृत रूप से संघ के दिनांक 7.3.2000 के सर्कुलनर में, जो कि 16 पृष्ठों का है तथा हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में है, राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के सदस्यों, राज्य तथा महानगरों की शाखाओं तथा श्री डी० रवीन्द्र नाइक के दिल्ली व हैदराबाद के दोनों पतों एवं राष्ट्रीय सुझाव समिति के सदस्यों, श्री सुधाकरराव नाइक, श्री रामसिंह जी भानावत तथा अनेकानेक दिग्गज नेताओं के पास भेजा गया, में स्पष्ट किया गया है। यह सभी प्रक्रिया लोकतांत्रिक ढंग से, 25-26 जनवरी, 1999, मुम्बई की बैठक में, राष्ट्रीय कार्यकारिणी परषिद् की बैठक 9-10 मार्च, 1999 दिल्ली में और 25-26 दिसम्बर, 1999 के गांधीनगर, गुजरात की बैठक में महासभा के सदस्यों के एकमत निर्णय से प्रस्ताव पारित कर पूर्ण हुई, जहां आम परिषद के सदस्य पूरे कोरम में उपस्थित थे। इन सभी बैठकों में डी० रवीन्द्र नाइक भाग लेने वाले तथा हस्ताक्षरकर्त्ता थे। इसलिए अध्यक्ष ने स्पष्टत: कहा कि यह दुर्भागयपूर्ण है कि यद्यपि यह मसला विगत दो वर्ष में, जब से कि नये नेतृत्व ने पद ग्रहण किया है, अनेकों बार चर्चित हुआ है, फैसला लिया गया है परन्तु यह आश्चर्यजनक है कि श्री डी० रवीन्द्र नाइक, जो कि स्वयं संघ के एक अनुभवी व परिपक्व नेता हैं, ने इस फिजूल और अनैच्छिक मसले को पुन: उठाया है,

इस स्पष्टीकरण ने भाग ले रहे सभी प्रतिनिधियों को संतोष प्रदान किया।

मार्ग-3 : इसके बाद तीसरे पहुँच मार्ग, जिसके अन्तर्गत गोष्ठियाँ करना, रैली निकालना तथा अन्य आन्दोलनकारी राहों को अपनाने इत्यादि पर चर्चा हुई और यह फैसला लिया गया कि इन सभी लोकतांत्रिक आन्दोलनकारी राहों की खोज सभी राज्य मुख्यालयों व हमारी अन्य सभी शाखाओं द्वारा की जानी चाहिए। अन्ततः हमें पाँच से दस लाख बंजारों की एक बड़ी रैली दिल्ली में वोट क्लब (संसद भवन के समीप) पर करनी है। परन्तु इस पहुँच मार्ग को पांच-छः महीने के लिए स्थगित करना चाहिए यानी तब तक हमें मार्ग—एक व मार्ग-दो के प्रस्तावित रास्तों पर चल कर हमें देखना चाहिए और यदि इन मार्गों से सफलता नहीं मिलती है तो हमें तीसरे मार्ग पर चलना शुरू कर देना चाहिए।

मार्ग-4 : चौथा पहुँच मार्ग तीसरी अनुसूची बनाने से संबंधित है। यह एक वृहत् मंच जैसे 'डीनोटिफाइड एण्ड नोमेडिक ट्राइबल्स राइट्स एक्शन ग्रुप (डी एन टी-रैग)' की मदद से भारत की लगभग 200 विमुक्त जातियों, जो कि भारत सरकार के 1952 के अधिसूचना के अन्तर्गत विवर्णित हैं, के परिसंघ के साथ उस मंच द्वारा किया जा सकता है जिसे ए आई बी एस एस से मदद करे तथा ए आई बी एस एस परिसंघ के सदस्य के रूप में किसी भी परिसंघ के ज्ञापन या अन्य दस्तावेज पर हस्ताक्षर करे। परन्तु साथ ही साथ ए आई बी एस एस को स्वतन्त्र रूप से बंजारों के हित और अधिकार की लड़ाई जारी रखनी चाहिए।

मार्ग-5 : पाँचवाँ पहुँच मार्ग कानूनी मंचों से संबंधित है। उच्चतम न्यायालय के एडवोकेट श्री देवराजन द्वारा कानूनी रास्ते की समस्याओं, आगा-पीछा तथा अन्य बातों की चर्चा सुनने के बाद अनेक प्रतिनिधियों ने सवाल उठाए थे, शंकाएं व्यक्त की थीं तथा विभिन्न पहलुओं पर स्पष्टीकरण चाहा था। अन्ततः यह फैसला लिया गया कि पांचवा मार्ग जो कि रिट याचिका के रूप में देश की अदालतों में जाने से संबंधित है, उसे अन्तिम विकल्प के रूप में ही चुना जाना चाहिए जब अन्य चारों मार्गों पर चलकर सफलता न मिले।

सभा का समापन श्री शंकर जाधव, महासचिव, ए आई बी एस एस के धन्यवाद प्रस्ताव के साथ सायं छह बजे हुआ।

टिप्पणी— दूसरे दिन (यानी 21.8.2000) ए आई बी एस एस के प्रतिनिधि निम्नलिखित राष्ट्रीय नेताओं से मिले तथा उन्हें न्यायमूर्ति श्री वेंकटचलैया आयोग (एन सी आर डब्ल्यू ए) को दिए गए ज्ञापन की प्रतियां दी।

1. श्रीमती सोनिया गांधी, सांसद, अध्यक्ष, ए आई सी सी और संसद में विपक्ष की नेता;

2. श्री येरॉन नायडू, सांसद, टी डी पी;

3. श्री वैंकय नायडू सांसद, महासचिव, बीजेपी;

4. श्री ज्यूल ओराम, जनजातीय मामलों के मंत्री, भारत सरकार, (प्रतिनिधियों के एक दल द्वारा)

5. श्री दिलीप सिंह भूरिया, अध्यक्ष अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार, (प्रतिनिधियों के एक दल द्वारा)।

('बूधन' के अंग्रेजी अंक सितम्बर-दिसम्बर, 2000 और जनवरी-मार्च, 2001 से साभार)

अनुवादक : अनिल कुमार पाण्डेय

गाली को अभिशप्त जातियाँ

☐ ए०के० अरुण

आदिवासी या अनुसूचित जनजातियाँ सदियों से 'भद्र समाज' का निशाना रही हैं। देश के कई राज्यों में ऐसी अनेक जनजातियाँ आज भी हैं जिन्हें अधिसूचित नहीं किया गया है। बांछड़ा, सांसी, बेरिया आदि जातियाँ तो हजारों साल से उपेक्षित जीवन जी रही हैं। प्रचलित सामाजिक मान्यताओं के अनुसार ये जातियाँ अवैध धंधे, वेश्यावृत्ति व अपराध का पर्याय मानी जाती हैं। रूढ़िवादी भारतीय समाज में ये मान्यताऐं भले ही टिकी हुई हों लेकिन प्रगतिवादी समाज का भी नज़रिया यथावत है—यह हैरानी की बात है। लोकतंत्र की दुहाई देकर बनने वाली सरकारों और उनकी संवैधानिक संस्थाओं द्वारा इन ''विमुक्त'' व ''घुमंतू'' मानी जाने वाली जातियों/जनजातियों को जलील करने का प्रयास लगातार जारी है। अभी हाल ही में मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट ''मध्य प्रदेश में जाति आधारित वेश्यावृत्ति'' से उत्पन्न विवाद ने आयोग की विश्वसनीयता पर जहाँ सवाल खड़े कर दिये हैं वहीं यह रिपोर्ट अब आयोग के गले की हड्डी बना हुआ है। आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति गुलाब गुप्ता द्वारा जारी इस ''रिपोर्ट'' को वापस लेने के लिये अनेक जनसंगठनों ने व्यापक दबाव बनाना शुरू कर दिया है लेकिन आयोग अभी भी अपनी रिपोर्ट पर कायम है और इसे मध्य प्रदेश का एक उपयोगी दस्तावेज मानता है।

मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग के इस ''अध्ययन'' की ''प्रायोजक'' एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ''यूनिसेफ'' है। अपने प्रायोजक के इस सहयोग के बदले आयोग ने उसकी तारीफ में कोई कमी नहीं छोड़ी है। न्यायमूर्ति गुप्ता ने रिपोर्ट की भूमिका में ही लिखा है कि ''आयोग यूनिसेफ का अभारी है जिसने इस समस्या के बारे में न सिर्फ आयोग की दिलचस्पी जगाई है बल्कि इस अध्ययन के लिये आर्थिक सहायता भी उपलब्ध कराई है।'' आयोग की इस विवादास्पद रिपोर्ट से कई सवाल खड़े होते हैं। पहला सवाल तो यह कि राज्य की एक जिम्मेदार तथा संवैधानिक मानवाधिकार संस्था द्वारा किसी अन्तर्राष्ट्रीय गैर-सरकारी संस्था से धन लेकर किसी जाति विशेष को ''वेश्या'' या ''भड़ुआ'' बताकर उनकी रिपोर्ट प्रकाशित करना कितना उचित है? दूसरा कि वेश्यावृत्ति में लिप्त इस पूरी जाति की 50 प्रतिशत महिलाओं को एच. आई. वी. पाजिटिव घोषित करना क्या अन्तराष्ट्रीय दिशा निर्देशों (पेरिस कन्वेंशन) का उल्लंघन नहीं है?

मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग की इस रिपोर्ट से भारतीय संविधान की धारा 14 एवं 21 का भी उलंघन होता है जिसमें ''समता'' एवं ''दैहिक स्वतंत्रता'' को अहम् माना गया है। रिपोर्ट में मध्य प्रदेश के कई जिलों में फैली कुछ विमुक्त जातियों में वेश्यावृत्ति का विस्तार से वर्णन है। इसमें कहा गया है कि एक खास अनुसूचित जाति, बांछड़ा में पैदा हुई नाबालिग लड़की को उसके माता-पिता और रिश्तेदार ही वेश्यावृत्ति के लिये मजबूर करते हैं। रिपोर्ट के अनुसार, ''इन जातियों में देह व्यापार कोई आर्थिक आवश्यकता नहीं है, बल्कि यह इन जातियों की सामाजिक मजबूरी है जो इनके पुरुषों द्वारा अपनी औरतों पर थोपी जाती है ताकि वे हमेशा फायदे में रहें।'' यह रिपोर्ट यह खुलासा करती है कि, ''इन जातियों के लोग शुरू से ही अपराधीवृत्ति के रहे हैं और चोरी-डाके में लिप्त रहे हैं। इन जाति के पुरुष आज भी कई तरह के अपराधों में लिप्त हैं और आजकल इनमें से अधिकांश देह व्यापार की दलाली का धन्धा करते हैं और अपनी महिलाओं के लिये पैसे वाले ग्राहक ढूंढ़ते हैं।''

इसमें सन्देह नहीं कि परम्परागत देह बाजारों में अनुसूचित जाति की महिलाएँ बहुत ज्यादा मात्रा में रही हैं, लेकिन अब ग्लोबलाइजेशन के इस दौर में देह बाजारों का स्वरूप और चरित्र भी बदल रहा है। तथ्य उपलब्ध हैं कि मध्यम व उच्च वर्ग की महिलाओं में ''काल गर्ल्स'' बनने या अधिक धन के लालच में अनेक पुरुषों से शारीरिक सम्बन्ध बनाने या धनाढ्य लोगों के यौन संतुष्टि के लिये इस्तेमाल होने की अनेक घटनायें महानगरों में रोज घटित हो रही हैं। कुछ

कहानियों या लेखों में इसका जिक्र भी हुआ है, लेकिन किसी मानवाधिकार संगठन ने इस पर कोई रिपोर्ट प्रकाशित नहीं की। परन्तु एक अंतर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संस्था से ''धन'' मिलते ही मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग ने इस रिपोर्ट में इस जाति विशेष की पचास प्रतिशत महिलाओं को ''एच. आई. वी. पाजिटिव'' भी बता दिया, यह विवाद अब तूल पकड़ रहा है।

कुछ खास जातियों की महिलाओं को लक्ष्य कर बनी यह रिपोर्ट अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर प्रकाशित की गई है। संयोग से सन् 2000 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में मनाया गया है। ऐसे में इस खास जाति की महिलाओं तथा पूरी महिला समाज का गुस्से में आना लाजिमी है। वेश्या का पट्टा लिये ये महिलायें यदि सामान्य जीवन में आना चाहती भी हों तो ऐसी रिपोर्ट उन्हें उसी जीवन में रहने का अभिशाप दे देती हैं। यह विडम्बना ही है कि तथाकथित सभ्य समाजों में ''खुले सेक्स'' को बढ़ावा देकर इस धन्धे को तो सेक्स इन्डस्ट्री का रूप दिया जा रहा है, लेकिन अनुसूचित जाति की इन महिलाओं को ''वेश्या'' बने रहने को मजबूर किया जा रहा है।

केरल की एक दिल्ली स्थित सामाजिक संस्था ज्वाइन्ट एक्शन काउन्सिल, कन्नूर (जैक) ने संयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान तथा मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति गुलाब गुप्ता को इस बाबत पत्र लिखा है और कई सवाल उठाए हैं।

आम तौर पर जब भी किसी आयोग (सरकार द्वारा नियुक्त) की कोई रिपोर्ट बनती है तो उसके पीछे कोई न कोई सामाजिक व मानवीय हित छिपे होते हैं। जाहिर है ऐसी संस्थाओं के पास ऐसे अध्ययन के लिये अपने कोष होते हैं जिससे अध्ययन व अनुसंधान को अंजाम दिया जाता है। यदि यह परम्परा चल निकली कि कोई भी गैर सरकारी संस्था अपना धन देकर ऐसे संवैधानिक न्यायवादी संस्थाओं को निर्देशित करने लगे तो यह मुद्दा गम्भीर बन जाता है और कई सन्देह खड़े करता है। इससे इन न्यायवादी मानवाधिकार संस्थाओं की मर्यादा व विश्वसनीयता भी प्रभावित होती है।

आजकल अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे अनेक विवादास्पद गैर जरूरी मुद्दों में सभी लोगों को शामिल करने का जी तोड़ प्रयास किया जा रहा है। इस प्रयास में कुछ बहुराष्ट्रीय चरित्र वाली बड़ी-बड़ी संस्थाओं के निजी उद्देश्य निहित हैं। अपने इन्हीं निजी उद्देश्यों की पूर्ति के लिये धन देकर ऐसे ही कुछ अध्ययन भी कराए जाते हैं जिसमें जनमानस तैयार हो और ऐसे प्रायोजित अध्ययन से इन संस्थाओं के जुड़े निजी उद्देश्य पूरे हो सकें। एड्स जैसे विवादास्पद रोग भी जरूरत से ज्यादा ऐसे ही प्रचार में आए। अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वैज्ञानिकों ने तो अब ''एड्स'' के औचित्य और अस्तित्व पर ही सवाल करने शुरू कर दिये हैं। नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक कैरी मुलिस तथा वर्कले विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक पीटर ड्यूसबर्ग का अध्ययन है कि अभी तक एच. आई. वी. वायरस के होने के ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। ऐसे ही आस्ट्रेलिया के पर्थ समूह के करीब 1200 वैज्ञानिक भी एच. आई. वी. के अस्तित्व को नकारते हैं और इस वायरस के प्रमाण उपलब्ध कराने वाले को 10 लाख अमरीकी डॉलर इनाम देने की घोषणा भी करते हैं। ज़ाहिर है कि किसी भी चीज का हौवा खड़ा कर उसकी आड़ में अपने स्वार्थ को साधा जा सकता है। मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग से अध्ययन करवाकर सम्भवतः उसकी प्रायोजक स्वयं सेवी संस्था भी अपना कोई स्वार्थ साध रही हो, यह अंदेशा निर्मूल नहीं है।

आयोग अपनी रिपोर्ट में कहता है कि उक्त जाति में वेश्यावृत्ति या देह व्यापार उनकी आर्थिक आवश्यकता नहीं है। इसी रिपोर्ट में एक जगह आयोग यह भी लिखता है कि पैसों के लालच में इस जाति के पुरुष अपनी महिलाओं व लड़कियों को देह व्यापार के लिये प्रस्तुत करते हैं। ये परस्पर विरोधी तथ्य लोगों को गुमराह करते हैं। रिपोर्ट में मन्दसौर के डा० पूनम सहगल की रिपोर्ट/अध्ययन का भी हवाला दिया गया है। डा० सहगल का अध्ययन भी इस जाति की अधिकांश महिलाओं के वेश्यावृत्ति में संलिप्तता की पुष्टि करता है। लेकिन अनेक समाजशास्त्री यह मानने को तैयार नहीं हैं कि किसी खास जाति की अनेक महिलाओं को वेश्यावृत्ति में लिप्त बताकर पूरी जाति को ''वेश्या'' करार दिया जाये। यह वैसे भी ''विकासशीलता'' और ''लोकतन्त्र'' की भावना के खिलाफ है। हालांकि रिपोर्ट स्वयं भी उक्त जाति की 50 प्रतिशत महिलाओं की ही वेश्यावृत्ति में संलिप्तता को उजागर करता है।

फिलहाल यह रिपोर्ट मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग

एवं यूनिसेफ दोनों के लिये अब ''गले की हड्डी'' बन गया है। कई स्वयंसेवी संस्थाओं ने इस रिपोर्ट के औचित्य और प्रमाणिकता पर ही सवाल उठा दिये हैं। केरल की संस्था ज्वाइन्ट एक्शन काउन्सिल (जैक) और मध्य प्रदेश की अन्य संस्थाओं ने सामूहिक रूप से मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग के इस ''भेद-भाव पूर्ण रिपोर्ट'' को ''अपमानजनक'' बताकर विवादों में डाल दिया है। उधर ''यूनिसेफ'' ने भी आयोग से शीघ्र रिपोर्ट को 'वापस लेने' तथा आगे वितरण नहीं करने का 'आदेश' दिया है। अब कई महिला संगठन भी इस विवादास्पद रिपोर्ट को महिलाओं की अस्मिता का अपमान मानकर उसके खिलाफ लामबन्द हो रहे हैं। अभी हाल ही में अखिल भारतीय जनतांत्रिक महिला संघ ने भी यूनिसेफ एवं मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग को पत्र लिख कर इस विवादास्पद रिपोर्ट पर अपना गुस्सा जताया है।

यह रिपोर्ट वेश्यावृत्ति जैसे सामाजिक बुराई के खिलाफ कोई ''सुधार अभियान'' या ''नसीहत'' जैसा तो नहीं लगता अलबत्ता इस विमुक्त जाति के खिलाफ एक अनर्गल प्रचार जरूर मालूम होता है। इस रिपोर्ट में परोक्ष रूप से तथाकथित व विवादास्पद रोग ''एड्स'' के लिये भी माहौल बनाने का प्रयास मालूम पड़ता है। रिपोर्ट कहती है कि ''इस वर्ग के चिकित्सीय परीक्षणों में उक्त जाति की 50 प्रतिशत महिलाएं एच.आई.वी. संक्रमण का शिकार पाई गई।'' उल्लेखनीय है कि एच.आई.वी. संक्रमण की घोषणा करने से सम्बन्धित कुछ अन्तर्राष्ट्रीय दिशा निर्देशों के अनुसार ऐसी घोषणा व महिलाओं या पुरुषों को बगैर बताए एच.आई.वी. की जांच करना ''मानवाधिकार हनन'' का मामला भी बनता है। अन्तर्राष्ट्रीय मान्यताओं के अनुसार व्यक्ति को पूर्व व पर्याप्त सूचना दिये बगैर उसके एच.आई.वी. संक्रमण की जांच करना सवर्था उचित नहीं है।

बहरहाल ऐसे विवादास्पद व गैर जरूरी अध्ययनों से मानवाधिकार आयोग को परहेज करना चाहिए, खासकर तब, जबकि ऐसे ''सामाजिक समस्या'' के समाधान की व्यापक कार्य योजना तैयार नहीं हो। सरकार या सामाजिक संगठन उक्त जातियों के विकास के लिये कोई मुकम्मल अभियान चला रहे हों ऐसा भी ज्ञात नहीं है। ऊपर से इस जाति की ''विसंगतियों'' को महज उजागर करना (उसके सुधार का प्रयास न करना) कोई क्रांतिकारिता नहीं मानी जा सकती। विदेशी संगठनों के निहित स्वार्थ के मद्देनजर हमारे संवैधानिक संगठनों को ''संयम'' और ''सावधानी'' बरतना ही चाहिये, नहीं तो सामाजिक विसंगतियाँ घटने की बजाए बढ़ती ही जाएंगी और हम बेहतरी की उम्मीद से कुछ और पीछे चले आएंगे।

(ए० के० अरुण विगत कई वर्षों से 'आजादी बचाओ आन्दोलन' में सक्रिय हैं। सामाजिक विषयों पर निरन्तर लिखते रहे हैं तथा वर्तमान में आजादी बचाओ आन्दोलन के दिल्ली में प्रवक्ता हैं।)

''आँख मूँदकर हमें समय की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। हमें अपनी मानसिक दासता की बेड़ी की एक-एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार होना चाहिए। बाहरी क्रान्ति से कहीं ज्यादा ज़रूरत मानसिक क्रान्ति की है। हमें दाहिने-बायें, आगे-पीछे दोनों हाथ नंगी तलवार नचाते हुए अपनी सभी रूढ़ियों को काटकर आगे बढ़ना चाहिये। क्रांति प्रचण्ड आग है वह गाँव के एक झोपड़े को जलाकर चली नहीं जाएगी। वह उसके कच्चे-पक्के सभी घरों को जलाकर खाक कर देगी और हमें नये सिरे से नये महल बनाने के लिए नींव डालनी पड़ेगी।''

– राहुल सांकृत्यायन

डीनोटिफाइड एण्ड नोमॉडिक ट्राइबल्स-राइट्स एक्शन ग्रुप

आगामी गतिविधियां :

● भाषा 'रिसर्च एण्ड पब्लिकेशन सेण्टर' से प्राप्त सूचना के अनुसार 'वेरियर एल्विन स्मारक व्याख्यान' आगामी 14 जुलाई, 2001 को वड़ोदरा में आयोजित किया गया है। स्मारक व्याख्यान न्यायमूर्ति श्री वेंकटचलैया, भारत के भूतपूर्व न्यायाधीश तथा अध्यक्ष, भारत के संविधान के कार्यकरण की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग द्वारा दिया जाएगा।

● विगत तीन वर्षों से 'डी एन टी-रैग' विमुक्त समुदायों पर अनेकों बार इकट्ठा होता रहा है और इन समुदायों पर चर्चा हुई। ताकि इनके हेतु विभिन्न मोर्चों पर लड़ाइयाँ कैसे लड़ी जाए। इन वर्षों मे अन्य बैठकों के अलावा हर साल अगस्त महीने में राष्ट्रीय बैठक की जाती है। इस बैठक का मुख्य उद्देश्य विभिन्न कार्यकर्ताओं द्वारा, जो कि इस मुहिम में सम्मिलित हैं, उनकी गतिविधियों को आपस में बैठकर विचार-विमर्श करना तथा आगे की योजना बनाना। इस वर्ष की बैठक आगामी 10-11 सितम्बर, 2001 को दिल्ली में होना निश्चित हुई है। विशेष जानकारी के लिए संपर्क करें—

डॉ० जी० एन० देवी, सचिव, डिनोटिफाइड एण्ड नोमेडिक ट्राइबल्स-राइट्स एक्शन ग्रुप-पता (6 यूनाइटेड एवेन्यू दिनेश मिल के पास), वड़ोदरा-390007 (गुजरात), टैलेक्स : 0265-331130, E-mail: bhasha @ bpnl.com

महापंडित राहुल सांकृत्यायन प्रतिष्ठान

उद्देश्य

* न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन के कृत्यों पर अनुसंधान कार्य करेगा तथा उनके कृत्यों पर किसी भी अनुसन्धान कार्य को सहायता एवं धन प्रदान करेगा एवं उसे प्रोन्नत करेगा।

* न्यास उन क्षेत्रों में जिनमें कि महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने कार्य किया जैसे इतिहास एवं पुरातत्व, मानव मात्र की प्रगति एवं विकास, यात्रा वृत्तांत यायावरी, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता, दर्शन, धर्म, भाषा, विज्ञान एवं समाज तथा भारत विद्या के क्षेत्रों में शिक्षा एवं अनुसंधान का कार्य करेगा तथा इन विषयों में किये गय कार्यों को प्रोन्नत करेगा तथा धन एवं सहायता प्रदान करेगा।

* न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन के अनुरूप लोकचित्त पर से मिथ्या रूढ़ियों के जंजाल को दूर करने की कोशिश करेगा।

* न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन द्वारा दिखाए गये भारतीय संस्कृति के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्वीकार करता है तथा न्यास इस दृष्टिकोण के प्रसार, प्रचार हेतु उचित कदम उठाएगा जिससे कि साधारण भारतीय धर्मान्धता एवं रूढ़िवादिता तथा अज्ञानता से ऊपर उठकर एक ऐसा मानव बन सके जो अपने अच्छे बुरे का फैसला स्वयं कर सके।

* न्यास मानव समाज के विकास का वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्वीकार कर विज्ञान एवं समाज के समन्वित विकास की ओर आम जनता का ध्यान आकर्षित करेगा। यह महापंडित राहुल सांकृत्यायन द्वारा दिखाए गये उस उद्देश्य के अनुरूप होगा जिसके द्वारा वे समस्त मानव जाति को न्याय, समता, अन्न वस्त्र और ज्ञानोपार्जन का सुयोग दिलवाना चाहते थे।

* न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन द्वारा तिब्बत से लाए गये दुर्लभ एवं अनमोल ग्रंथों एवं पाण्डुलिपियों को भोट भाषा से संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं में अनुवाद एवं प्रकाशन की व्यवस्था कराएगा। न्यास महापंडित की अन्य पुस्तकों को भी विभिन्न भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में अनुवादित कराने एवं प्रकाशित करने/कराने की व्यवस्था करेगा। साथ ही न्यास शीघ्र बिहार रिसर्च सोसायटी में महापंडित राहुल द्वारा दान दिये गये ग्रन्थों की माइक्रोफिल्मिंग का प्रबन्ध करेगा व इन्हें दिल्ली में स्थानान्तरण करवाने का प्रयत्न करेगा जिससे कि ज्यादा से ज्यादा लोग इन ग्रंथों का उपयोग कर सकें।

* न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन के समग्र साहित्य एवं उन पर हो रहे सारे कार्यों को एक स्थान पर उपलब्ध करायेगा।

* न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन के कृत्यों को सस्ते दाम पर आम जनता को उपलब्ध करायेगा। ऐसा करने के पीछे न्यास का उद्देश्य है ''महापंडित राहुल सांकृत्यायन'' के कृत्यों को जन साधारण तक पहुंचाना जिनके लिए उन्होंने लिखा।

बूधन

एजेंट बनें :

अनेक जगहों से हमें पाठकों की शिकायत मिली है कि 'बूधन' उन्हें उनके शहर में नहीं मिल पा रही है। पाठकों की शिकायत को ध्यान में रखते हुए हम एजेण्ट नियुक्त करना चाहते हैं। एजेंसी के लिए कृपया हमारे कार्यालय से संपर्क करें अथवा हमें लिखें। —संपादक

बूधन प्राप्त करें :

1. वाणी प्रकाशन बुक कार्नर, श्रीराम सेंटर, मंडी हाउस, नई दिल्ली
2. पुस्तक मंडप, स्टॉल नं 3, कला संकाय (दिल्ली विश्वविद्यालय नार्थ कैम्पस)
3. पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, जी-2 कनॉट सर्कस, नई दिल्ली-110001
4. गीता बुक सेंटर, शापिंग कॉम्पलेक्स, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय परिसर, नयी दिल्ली-67